।। यशोगीतिः ।।

(श्रमणधर्ममुकुटायमान-योगिराज-पूज्यमुनिवर्य-
'श्रीरामजीलाल'-महाराज-पुण्यचरितरूप काव्यम्)

सम्प्रेरक

श्री सुभद्र मुनि

रचयिता

डॉ० दामोदर शास्त्री

व्याकरणाचार्य, सर्वदर्शनाचार्य जैनदर्शनाचार्य,
एम० ए० (संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत व जैनशास्त्र)
विद्यावारिधि (पी-एच० डी०),
उपाचार्य (रीडर) एवं अध्यक्ष जैन दर्शन विभाग
श्री लालबहादुर-शास्त्री-केन्द्रीय-संस्कृत-विद्यापीठ,
(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)
कटवारिया सराय, नई दिल्ली, पिन १९००१६

प्रकाशक

मुनि मायाराम स्मारक प्रकाशन, दिल्ली

○ पुस्तक	यशोगीति (सस्कृत काव्य)
○ सम्प्रेरक	श्री सुभद्र मुनि
○ रचयिता	डॉ दामोदर शास्त्री
○ आवरण सज्जा	जैन आर्ट सर्विस, १२६, सुभाष पार्क विस्तार, रानी झासी मार्ग, शाहदरा, दिल्ली-३२
○ अवतरण	श्री योगिराज जन्म-शताब्दी समारोह (दिनाक ११ नवम्बर १९९०)
○ लागत	बीस रुपये
○ प्रकाशक	मुनि मायाराम स्मारक प्रकाशन के० डी० ब्लाक, विशाखा एन्क्लेव पीतमपुरा, दिल्ली-११००३४
○ फोटोकम्पोजिंग	एडवरटाईजिंग इण्डिया, १/५३२१, बलबीर नगर एक्स्टेंशन, दिल्ली-३२

परम पूजनीय, शासन-सूर्य
गुरुदेव मुनिश्री रामकृष्ण जी महाराज
को
सश्रद्ध!



देवेन्द्र अग्रवाल

Ajanta Packagings, A-23, Jhilmil Industrial Area,
G T Road Delhi-110032, Phone 2280554

आशीर्वचन

— शासनसूर्य मुनिश्री रामकृष्ण जी म०

☐ परम पूज्य गुरुमहाराज (योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज) इस युग के दिव्य-महापुरुष थे। वे योगी नही योगिराज थे। भारत की जनता उनके सुश्रीक चरणार्विन्दों मे श्रद्धा से प्रपूत अर्घ्य समर्पित करती आ रही है।

☐ उन सूर्यायमाण ज्योति-पुरुष की जन्म-शताब्दी पर प्रथित-प्रख्यात विद्वान् डॉ० दामोदर शास्त्री ने श्रद्धामय सस्कृत काव्य 'यशोगीति' की सरचना की है। यह सरचना श्रद्धा-सुधा से स्नात अनिन्द्य तत्त्व से आप्लावित है।

☐ इस सत्काव्य मे लेखक ने अपने श्रद्धामय भावो को समष्टि-रूप मे अभिव्यक्त करते हुए गुरुदेव के अवदात चरित्र का चित्रण किया है। कृति सुषमा-सम्पदा से अलकृत है। सस्कृत-विश्व मे तो इसका सम्मान अवश्य होगा, किन्तु यह सत्कृति प्रत्येक श्रद्धा-परक मनुष्य के अन्त करण का अलकार भी सिद्ध होगी।

☐ डॉ० दामोदर शास्त्री के इस श्रद्धाभिभूत पुरुषार्थ के लिये धर्म-वृद्धि के अनेकश आशीर्वचन निस्सृत हैं।

प्रस्तुत कृति

युगपुरुष पूज्य योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज का यह जन्मशती (1990-91) वर्ष है।

इस प्रसग पर सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० दामोदर शास्त्री ने प्रस्तुत कृति - (यशोगीति सस्कृत काव्य) की रचना की है। इस कृति में लेखक ने जन-मानस को बताया है कि भारत के इस महान् योगी ने किस प्रकार सयम, नियम, तप-त्याग, योग-साधना से स्वय को उज्ज्वल/समुज्ज्वल बनाया था। साधना के शिखर पर स्थित होकर उन्होंने विश्व को आत्म-कल्याण का पथ प्रदर्शित किया। जन-जन को बोधि प्रदान कर उनके अन्तर् तम को दूर किया था।

अपने इन कार्यों/उपदेशो से वे युग-पुरुष कहलाये।

काव्य-शास्त्र की दृष्टि से सस्कृत-साहित्य की यह एक उत्कृष्ट रचना है। पाठक को भक्ति एव आनन्द से सराबोर कर देने वाला यह काव्य है। गुरुभक्ति के इस दिव्यानन्द से सस्कृत पाठक ही लाभान्वित होंगे, ऐसा नही है। सामान्य हिन्दी पाठक भी इससे पूरा-पूरा आनन्द ले सकेगे।

चरित्र नेता का पूरा जीवनवृत्त इसमे बडे सहज ढग से वर्णित हुआ है।

गुरुदेव योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज जनता में 'योगिराज' विशेषण शब्द से जाने जाते थे। यह विशेषण इतना जन-प्रिय था कि अधिकाशत लोग गुरुदेव श्री को केवल 'योगिराज' ही कहते हैं। प्रस्तुत कृति के श्लोको मे उनका जन-प्रिय विशेषण एव नाम दोनो का प्रयोग किया गया है। कही-कही पर छन्द की मात्रा की दृष्टि से 'रामलाल' शब्द भी प्रयुक्त हुआ है। पाठक इसे पूर्ण नाम के रूप में ही जाने/पढे।

सभी दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण बनी यह कृति, पाठको के मन को मोह देने वाली होगी, ऐसा हमारा विश्वास है।

मन्त्री

मुनि मायाराम स्मारक प्रकाशन

दिल्ली

डॉ० दामोदर शास्त्री : परिचय रेखा

विद्वद् विभूति डॉ० दामोदर शास्त्री भारत के उन मान्य विद्वानो मे से एक हैं, जिन्होने अपना जीवन पूरी तरह से गीर्वाण भारती को समर्पित किया हुआ है। इन्होने भारत की सास्कृतिक धरोहर को सुरक्षित रखने मे तो अपना योगदान दिया ही है। उसका सवर्धन एव पोषण भी प्रभूत रूप से किया है। डॉ० साहब के कार्यों/सेवाओं का यदि आकलन/परिगणन किया जाये तो एक लबी श्रृखला निबद्ध होगी। 'जो कार्य कर दिया है', उसे स्मरण न करते हुए ये आज भी पूरे समर्पण एव निष्ठा भाव से नूतन सरचनाओ मे लगे रहते हैं। आईये, ऐसे विशिष्ट व्यक्तित्व से आप भी परिचित बने

\+ \+ \+

डॉ दामोदर शास्त्री का जन्म राजस्थान के चिडावा (जि० झुझुनु ग्राम मे सन् 1942 मे हुआ था। इनका परिवार प्रसिद्ध धर्मनिष्ठ ब्राह्मण परिवार है। इस परिवार की एक और विशेषता यह है—लगातार छ पीढ़ियो से सस्कृत भाषा का अध्ययन-अध्यापन अबाध रूप से चल रहा है।

इस परिवार के पूर्वज कालान्तर मे विद्यानगरी वाराणसी मे निवसित हुए। यहा पर रहते हुए श्री दामोदर जी ने विद्या भगवती की आराधना की। व्याकरण, साहित्य, न्याय दर्शन जैसे दुरूह विषयो का व्यापक एव अधिकारिक अध्ययन किया। इनकी विद्या-रुचि इसी बात से आकी जा सकती है, केवल 19 वर्ष की अवस्था मे एम०ए० स्तर की परीक्षाये उत्तीर्ण कर ली थी। विद्याध्ययन का क्रम और आगे बढा। एम०ए० (सस्कृत), एम०ए० (हिन्दी), आचार्य (व्याकरण), आचार्य (सर्वदर्शन) आर्दि उपाधियो के अतिरिक्त, प्रथम श्रेणी मे प्रथम श्रेणी मे एम०ए० (प्राकृत) आचार्य (जैन दर्शन) में सम्पन्न की। जैन दर्शन मे 'देवतत्त्व' विषय पर पी०एच०डी० (विद्यावारिधि) उपाधि से अलकृत हुए।

देश की विशिष्ट शिक्षा-सस्थाओ की ओर से अनेक बार सम्मानित तथा 'महामहोपाध्याय' उपाधि से विभूषित बने।

जैन आचार्यों/मुनियो/विद्वानो के सम्पर्क से जैन सस्कारो से विशेषत अनुप्राणित बने। परिणामत जैन आगमो, दर्शन-ग्रन्थो पर गम्भीर अध्ययन, चिन्तन एव मनन किया। जैन श्वेताम्बर तेरापथी महासभा (कलकत्ता), महावीर विश्वविद्यापीठ (दिल्ली), भारतीय ज्ञानपीठ (दिल्ली) जैसी श्वेताम्बर-दिगम्बर सस्थाओ मे जैन ग्रन्थो के सम्पादन/प्रकाशन तथा अध्ययन-अध्यापन मे (1961 से 1975 तक) सलग्न रहे।

सन् 1975 से भारत सरकार द्वारा सस्थापित श्री लालबहादुर शास्त्री सस्कृत विद्यापीठ (विश्वविद्यालय) दिल्ली मे जैन-दर्शन विभाग के अध्यक्ष व उपाचार्य पद पर कार्यरत हैं।

सस्कृत प्राकृत भाषाओ मे काव्य-रचनाओ मे डॉ० साहब परम निष्णात हैं। वर्तमान मे इनके अनेक शोधपत्र/शोधग्रन्थ व विशिष्ट कृतियो का प्रकाशन हुआ है, अनेक ग्रन्थ प्रकाशनाधीन हैं।

प्रस्तुत कृति (यशोगीति) लेखक की विद्वत्ता, आस्था की परिचायक, सस्कृत-साहित्य की उल्लेखनीय एव अध्यात्म जगत् की गौरवास्पद कृति है।

— **अनिल जैन 'अखिल'**

मंगलाचरण

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

धर्माधर्म-हितहितादि-विषयाज्ञानान्धकारच्छिदम्,
नत्वावीरजिन विवेकनिधिद, तच्छासनोद्योतकान् ।
भव्योद्धारक-योगिराज-सुमुनीन् 'श्रीरामजीलाल'-सत्–
सज्ज्ञान्, तन्मुनिवर्य-पूतचरित वक्ष्ये यथाबुद्धयहम् ।।

अर्थ धर्म-अधर्म, हित-अहित आदि विषयो के अज्ञान-अन्धकार को नष्ट कर सद्विवेक की निधि प्रदान करने वाले अंतिम तीर्थकर श्री वीरजिनेन्द्र को, तथा उनके धर्म-शासन के उद्योतक, भव्य प्राणियो के उद्धारक योगिराज मुनिवर्य श्री रामजीलाल जी महाराज को वन्दना करता हुआ, उन मुनिवर के पावन चरित का, मैं अपनी बुद्धि के अनुरूप वर्णन कर रहा हू।

(१)

(उपजातिच्छन्द)

विशिष्टपुण्यात्मनिवासभूते,
जगद्वरे भारतवर्षनाम्नि ।
अध्यात्मधर्मप्रमुखेऽत्र देशे,
हर्याणकेतिप्रथित प्रदेश ।।

अर्थ · भारतवर्ष नाम का देश लोक मे श्रेष्ठ है, विशिष्ट पुण्यात्मा जनो का निवास-स्थान है तथा यहा अध्यात्म धर्म की प्रधानता है। इस देश मे 'हरियाणा' नामक एक प्रसिद्ध प्रदेश है।

(२)

(उपजातिच्छन्द)

विशिष्ट – शौर्योर्ज्जितकीर्तिमद्भि ,
स्वात्माभिमानादि-सुसम्पदाढ्यै ।
कृषिप्रधानोद्यमशालिभिश्च,
जनै श्रितोऽय प्रवर प्रदेश ।।

अर्थ 'हरियाणा' नाम के इस श्रेष्ठ प्रदेश मे जो निवासी लोग हैं, वे कृषि-प्रधान उद्योग मे सलग्न हैं, स्वाभिमान आदि (गुणो की) सम्पदा के धनी हैं, तथा उन्होने अपनी विशिष्ट शूरता से कीर्ति अर्जित की है।

(३)

(उपजातिच्छन्द)

सौहार्दपूर्णव्यवहारदक्षै ,
सदोद्यतैश्चातिथि-सत्क्रियासु ।
स्वमातृभूगौरवमुद्वहद्भि ,
अधिष्ठित सत्पुरुषैश्चकास्ति ।।

अर्थ इस प्रदेश की शोभा यहा निवास करने वाले उन सत्पुरुषो के कारण है, जो अपनी मातृभूमि का गौरव बढाते हैं, अतिथि-सत्कार जैसे प्रशस्त क्रियाओ मे सदैव तत्पर रहते है तथा जो सौहार्दपूर्ण व्यवहार मे कुशल हैं।

(४)

(उपेन्द्रवज्राछन्द)

मदोद्धताना सुभटेश्वराणाम्,
अनेकवाराक्रमणान्यमुत्र ।
स्वगौरवाक्षुण्णतया सदैष ,
स्थित , कथ नैव समाद्रियेत ।।

अर्थ यहा मदोन्मत्त महायोद्धाओ के अनेक बार आक्रमण होते रहे, किन्तु जो अपना गौरव सुरक्षित रखते हुए सदा खडा रहा, वह भला क्यो समादरणीय नही होगा ?

(५)

(उपजातिच्छन्द)

कर्तव्यबोधार्थमिहार्जुनाय,
कृष्णेन गीतोपनिषत्सुगीता।
यतो हरेरानकमत्र जातम्,
अतोऽस्ति हर्यानकनाम सार्थम्।।

अर्थ यही श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कर्तव्य का बोध कराने के लिए 'गीता' उपनिषद् का गायन/वाचन किया था। चूंकि यहा 'हरि' (कृष्ण) का 'आनक' (अर्थात् प्रोत्साहक उद्‌बोधन, या रण-भेरी का बजाना) हुआ था, इसलिए इस प्रदेश का 'हरियाणा' नाम सार्थक होता है।

(६)

(उपजातिच्छन्द)

सौवीर-सिन्धुप्रभृतीन् प्रदेशान्,
विहर्तुकामश्चरमो जिनेन्द्र।
तीर्थंकरोऽत्र व्यचरत् पुरेति
प्रोक्त पुराणज्ञ-बुधैश्च कैश्चित्।।

अर्थ कुछ पुराण-वेत्ता विद्वानो का यह भी कहना है कि अन्तिम तीर्थंकर जिनेन्द्र (महावीर), सौवीर-सिन्धु आदि देशो मे विहार करने के लिए इसी प्रदेश से विचरण करते हुए गये थे।

(७)

(उपजातिच्छन्द)

पुण्यात्मना सत्पुरुषोत्तमानाम्,
पवित्रपादाब्ज-रजोभिरेष ।
पवित्रता श्रेष्ठतमा दधाति,
प्रसिद्ध-'हर्यानक'-सुप्रदेश ।।

अर्थ पुण्यात्मा व उत्तम सत्पुरुषो के चरण-कमलो की पवित्र धूलि से यह प्रसिद्ध 'हरियाणा' प्रदेश श्रेष्ठतम पावनता रखता है।

(८)

(उपजातिच्छन्द)

विभाति तत्रापि मनोभिराम,
ग्रामो बडौदेतिसुनामधारी।
शुद्धात्मना धार्मिकसज्जनानाम्,
तीर्थोपमा पावनजन्मभूमि ।।

अर्थ इस 'हरियाणा' प्रदेश मे भी 'बडौदा' नाम का मनोहारी एक गाव सुशोभित है जो शुद्धात्मा धार्मिक सत्पुरुषो की पवित्र जन्मभूमि के रूप मे तीर्थ-तुल्य है।

(९)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

ग्रामेऽस्मिन् वसति स्म धर्मनिरत सद्भाववान् 'चौधरी-
गगाराम' इतिप्रशसिततमा सज्ञा दधन् कीर्तिमान्।
आढ्यो भूमिपति सुखान्यनुभवन् न्यायार्जितैर्वैभवै
दीनाभ्युद्धरणे सदोद्यमपर सुश्रावकेष्वग्रणी ।।

अर्थ इसी ग्राम मे 'चौधरी गगाराम' इस शुभ नाम वाले यशस्वी, धर्मनिष्ठ, प्रशस्त विचारो वाले श्रेष्ठ गृहस्थो मे प्रमुख धनाढ्य चौधरी (भूमिपति) रहते थे, जो न्याय से अर्जित धन-वैभव से सुखी थे तथा दीन-जनो के उद्धार मे सदैव तत्पर रहते थे।

(१०)

(आर्याछन्द)

महाराम, सुखदयाल, कन्हारामश्च तत्सुता आसन्।
पुत्री च 'कत्तिए'ति—नाम्नी तस्याभवन्मान्या ।।

अर्थ उन (चौधरी गगाराम जी) के (१) श्री महाराम, (२) श्री सुखदयाल तथा (३) श्री कन्हाराम—ये (तीन) पुत्र थे। उनकी एक पुत्री भी थी जिसका नाम 'कत्तिआ' (कृत्तिका) था।

(११)

(आर्याछन्द)

तेषु च कन्हाराम विरक्तिभावेन सयुत सततम् ।
नैव गृहस्थावस्थाम् अगीकर्तुं च सन्नद्ध ।।

अर्थ इन (तीनो पुत्रो) मे चौधरी कन्हाराम वैराग्य वृत्ति से युक्त थे, अत वे गृहस्थ अवस्था को स्वीकार करने के लिए तैयार नही हुए।

(१२)

(आर्याछन्द)

सा सडीलेत्याख्ये, ग्रामे पुत्री विवाहिता जाता ।
सत्कुलवशीयेन, वरेण सह सद्गुणाढ्येन ।।

अर्थ (चौधरी गगाराम की) पुत्री का विवाह 'सडील' नामक गाव मे सत्कुलीन व सद्गुण-सम्पन्न 'वर' के साथ हुआ था।

(१३)

(आर्याछन्द)

भूमिपतेर्द्वौ पुत्रौ, गगारामस्य मान्यवर्यस्य।
अगीकृतगार्हस्थ्यौ, जातौ परिणीतसत्कन्यौ।।

अर्थ सम्माननीय चौधरी (भूमिपति) श्री गगाराम जी के दो पुत्रो (चौ० महाराम तथा चौ० सुखदयाल) ने श्रेष्ठ कन्याओ के साथ विवाह कर गार्हस्थ्य धर्म को अगीकार किया।

(१४)

(वसन्ततिलकाछन्द)

यश्चौधरी 'सुखदयाल' - सुसज्ञक स,
'लाडो' इतिप्रथितनामवती सुभार्याम्।
सप्राप्य कुव्यसनसगति - सन्निवृत्त,
आसीत् स्वधर्मनिरतो गुणवान् गृहस्थ।।

अर्थ चौधरी सुखदयाल जी, जो 'लाडो' नामक श्रेष्ठ भार्या को प्राप्त कर 'गृहस्थ' हुए थे, समस्त कुव्यसनो के ससर्ग से रहित थे तथा गुणी व धार्मिक प्रकृति के थे।

(१५)

(आर्याछन्द)

परिवारे च तदीये, सुखोपभोगादिसाधनैर्युक्ते।
दु खमिद यन्नासीत्, स्ववश-विस्तारक कश्चित्।।

अर्थ इन (चौधरी सुखदयाल तथा चौधरी महाराम) के परिवार मे सुखोपभोग के अनेक साधन विद्यमान थे, किन्तु दु ख इस बात का था कि इस परिवार की परम्परा को बढ़ाने वाला कोई (सुपुत्र) नही था।

(१६)

(उपजातिच्छन्द)

सुतोद्भवाशान्वितदम्पतेश्च,
वेगेन काल सुचिर प्रयात ।
अभीष्टसिद्धि सुखदा न लभ्या,
विना हि पुण्योदयमत्र लोके।।

अर्थ पुत्र की उत्पत्ति की आशा मे पति-पत्नी का काफी समय बीत गया। क्योंकि इस ससार मे पुण्योदय के बिना सुखदायी इष्ट-सिद्धि प्राप्त नही होती।

(१७)

(वसन्ततिलकाछन्द)

किन्त्वेकदा सुखदयाल - महानुभाव-
पुण्योदयाच्छुभतमोऽवसर प्रजात ।
भार्या प्रिया सुतमसूयत तस्य 'लाडो'-
देवी प्रमोदित-समस्त-कुटुम्बिलोक ।।

अर्थ किन्तु एक समय चौ० सुखदयाल महानुभव के जीवन मे पुण्योदय के कारण शुभतम अवसर आया। उनकी 'लाडो' देवी नामक प्रिय धर्मपत्नी ने पुत्र को जन्म दिया और समस्त पारिवारिक/सम्बन्धी जनो ने आनन्द मनाया।

(१८)

(उपजातिच्छन्द)

दिव्यात्मन पुण्यवतोऽत्र वशे,
हयाब्धिखोर्वीमितविक्रमाब्दे ।
नभस्यमासस्य च कृष्णपक्षे,
तिथौ नवम्या शुभजन्म जातम् ।।

अर्थ सवत् १९४७ मे भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि को इस वश मे दिव्यात्मा पुण्यशाली बालक का शुभ जन्म हुआ।

(१९)

(इन्द्रवज्राछन्द)

वर्धापन स्नेहिजनै समस्तै,
पित्रो कृत बान्धवमित्रवर्गै ।
हर्षान्वितैर्मंगल-गीतवाद्यै,
पुत्रोत्सवोऽकारि शुभे दिनेऽस्मिन् ।।

अर्थ समस्त स्नेही लोगो तथा बन्धु-बान्धवो व मित्र-वर्ग ने माता-पिता को बधाइया दी और इस शुभ दिन मे हर्षयुक्त होकर मागलिक गीतो व गाजे-बाजो के साथ पुत्रोत्सव का आयोजन किया।

(२०)

(उपजातिच्छन्द)

धर्मप्रभावोऽस्त्यविचिन्त्यशक्ति,
येनाद्य वशेऽजनि बालकोऽयम् ।
धर्मप्रभो शासनदेवताया,
अनुग्रहो वेत्यमनिष्ट लोक ।।

अर्थ लोगो ने माना कि धर्म की महिमा मे वह शक्ति है जिसका अनुमान नही लगाया जा सकता। इसी महिमा के कारण, या फिर धर्म-प्रभु के शासन-देव के अनुग्रह से, इस वश मे आज यह बालक पैदा हुआ है।

(२१)

(उपजातिच्छन्द)

धर्मप्रभो 'राम'जिनस्य नूनम्,
सम्पत् सुतोऽसाविति सम्प्रधार्य।
श्रीरामजीलाल इति प्रदत्तम्,
अस्मै शुभ नाम जनानुमत्या ।।

अर्थ निश्चय ही यह बालक धर्म-प्रभु (भगवान्-श्रीराम जी) का (दिया हुआ) बेटा तथा उनकी ही सम्पत्ति (लाल) है–ऐसा मानकर लोगों की सहमति से इस बालक को 'श्रीरामजीलाल' ऐसा शुभ नाम दिया गया।

(२२)

(इन्द्रवज्राछन्द)

भ्रातृत्रयस्यापि कुटुम्बमध्ये,
आसीच्छिशू रजक एक एव ।
स्निह्यन्ति सर्वे जननी, पिता च,
ज्येष्ठ पितृव्यश्च सभार्य एनम् ।।

अर्थ तीनो भाइयो (चौ० महाराम, चौ० सुखदयाल जी तथा चौ० कन्हाराम) के इन श्रेष्ठ परिवारो के बीच मे यह एकमात्र बालक था जिससे सबका मनोरजन होता था। इसलिए सभी लोगो–माता, पिता, ताऊ तथा ताई–का इस बालक के प्रति प्रेम था।

(२३)

(उपजातिच्छन्द)

निसर्गबाल्योचितचित्तहारि-
क्रिडाभिरामोदयति स्म बाल ।
मन समेषा हरति स्म तस्य,
माधुर्यपूर्णा च सदैव वाणी ।।

अर्थ यह बालक अपनी बाल्योचित स्वाभाविक मनोहारी क्रीडाओ से सभी को आनन्दित करता था। इसकी मधुरता भरी वाणी सदैव सभी लोगो का मन आकर्षित करती रहती थी।

(२४)

(इन्द्रवज्राछन्द)

स्नेह निज ज्येष्ठपितृव्यपत्नी,
तस्मै जनन्या अधिक ददाति ।
अत्रोच्यते कि बहु, नित्यमत्ति,
बाले प्रिये भुक्तवतीयमन्नम् ।।

अर्थ ताई जी इस बालक पर उसकी माता से भी अधिक अपना प्यार उडेलती थी। इस सम्बन्ध मे अधिक क्या कहा जाय, वह (ताई जी), जब यह बालक खाना खा लेता था, तभी अन्न ग्रहण करती थी।

(२५)

(इन्द्रवज्राछन्द)

क्षेत्रे च कृष्ये निजके स्वपित्रा,
सार्द्ध प्रयाति स्म यदा स बाल ।
अके समादाय ममत्वभावात्,
प्रत्यागत पृच्छति त पितृव्या ।।

अर्थ जब कभी यह बालक (बडा होने पर) अपने पिता के साथ अपने खेत मे जाता था, तो लौटने पर ताई जी उसे अपनी गोद मे बैठाकर ममता के कारण यह पूछती थी–

(२६)

(बसन्ततिलकाछन्द)

मद्वारितोऽपि जनकस्तव कोमलागम्,
कि त्वा नु कर्मणि कठोरतरे नियुंक्ते ?
अस्मद्गृहे तु बहव खलु सन्ति भृत्या ,
कि ते मृता , यदधुना विनियोज्यसे त्वम् ।।

अर्थ मैंने तेरे पिता को मना भी किया है, फिर भी वह कही तुम्हारे कोमल शरीर का ध्यान न रखकर तुम्हे किसी कठोर काम-काज मे लगा तो नही देता ? हमारे घर मे बहुत से नौकर हैं, क्या वे सब मर गए, जो तुम्हे काम मे लगाया जा रहा है ?

(२७)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

आसीत् क्षेत्रप-पारिवारिक-कृषिक्षेत्रे पुरा निर्मितम्,
एक कोष्ठकमत्र सनिवसति स्मैकोऽतिवृद्धो नर ।
आसीच्छ्मश्रु यदीयमन्यविस्मयकर चापाददीर्घं महत्,
य प्राय शतवत्सरायुरभवद् गत्यागतावक्षम ।।

अर्थ चौधरी (क्षेत्रप) साहब का जो पारिवारिक खेत था, उसमे एक कोठारा पहले से बना चला आ रहा था, जिसमे एक अत्यन्त वृद्ध साधु रहा करते थे। इनकी दाढी पावो तक लम्बी थी जिसे देखकर सभी को आश्चर्य होता था। इनकी आयु करीब सौ साल की थी और वे अधिक चलने-फिरने मे असमर्थ थे।

(२८)

(उपजातिच्छन्द)

तस्मै सुवृद्धाय महात्मने स ,
श्रीरामजीलाल उदारचेता ।
निजाद् गृहाद् भोजनमाददान ,
प्राय स्वय भोजयति स्म भक्त्या ।।

अर्थ उदार मन वाले श्री रामजीलाल उन्ही वृद्ध महात्मा जी के लिए प्राय अपने घर से भोजन ले जाते और भक्तिपूर्वक उन्हे स्वय खिलाते थे।

(२९)

(उपजातिच्छन्द)

पुण्यात्मना वृद्धमहात्मनाऽपि,
प्रदीयते स्म स्वहृदा शुभाशी ।
"हे पुत्र! नून पुरुषो महास्त्वम्,
परोपकारी च भविष्यसीति ।।

अर्थ वे पुण्यात्मा बूढे महात्मा जी भी श्री रामजीलाल को अपने हृदय से शुभाशीर्वाद दिया करते थे—बेटे! तू निश्चय ही आगे चलकर बडा परोपकारी और महान् व्यक्ति बनेगा।

(३०)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामलालस्य निरीक्ष्य चेष्टा,
ज्ञानेन केचिद् वयसा च वृद्धा ।
समन्वमायन्त विचारदक्षा,
सद्धर्मनेतृत्वममुष्य भावि ।।

अर्थ श्री रामजीलाल की इन चेष्टाओ को देखकर आयु से और ज्ञान से वृद्ध विचारशील व्यक्तियो को यह अनुमान होने लगा था कि यह भविष्य मे सद्धर्म के क्षेत्र मे नायक/नेता बनेगा।

(३१)

(उपजातिच्छन्द)

सामाजिकी बालविवाहरूपा,
प्रथा तदानीमनुवर्तमाना ।
अतोऽस्य सर्वै परिवारवृद्धै ,
स्नेहाद् विवाहानुमति प्रदत्ता ।।

अर्थ उस समय बाल-विवाह की प्रथा समाज मे विद्यमान थी, इसलिए तदनुसार परिवार के सभी बडे-बूढो ने स्नेह के कारण इन (रामजीलाल) के विवाह की स्वीकृति दे दी।

(३२)

(उपजातिच्छन्द)

मागल्यपूर्णोत्सवपूर्वक स ,
प्रवर्द्धितात्मीयजनप्रमोद ।
श्रीरामलालो दशमाब्द एव,
विवाहित सत्कुलकन्ययाऽभूत् ।।

अर्थ श्री रामजीलाल का दसवे वर्ष की आयु मे ही मगलमय उत्सवादि के साथ सत्कुलीन कन्या से विवाह हो गया, जिससे आत्मीय जनों का आनन्द और भी बढ गया।

(३३)

(इन्द्रवज्राछन्द)

दैवस्तु तज्जीवनमिच्छति स्म,
निर्मातुमध्यात्मपरं प्रकामम्।
वर्षद्वयानन्तरमेव पत्नी,
श्रीरामलालस्य दिवंगताऽभूत्।।

अर्थ किन्तु दैव इच्छा तो इनके जीवन को अत्यधिक अध्यात्ममय बनाने की थी। फलस्वरूप, दो वर्षो के बाद ही, श्री रामजीलाल की धर्मपत्नी दिवगत हो गई। (तब वे १२ वर्ष के थे।)

(३४)

(इन्द्रवज्राछन्द)

अत्यन्तपुष्टं बलशालिदेहम्,
उत्साहशक्तिं दधतश्च तस्य।
यून प्रभावोऽप्रतिम प्रजात,
ग्रामे प्रदेशेऽपि समस्त एव।।

अर्थ युवावस्था मे इनका शरीर अत्यन्त पुष्ट व बलिष्ठ था, उत्साह व शक्ति भी शरीर मे प्रभूत थी, जिससे समस्त गाव तथा प्रदेश मे इनका अनुपम प्रभाव स्थापित हो गया था।

(३५)

(उपजातिच्छन्द)

आमन्मदाचारयुतानि तस्य,
वयस्यमित्राण्यपि तत्समानि ।
आमोद-तृप्तानि च नित्यमेव,
क्रीडाप्रियाणि भ्रमणोत्सुकानि ।।

अर्थ श्री रामजीलाल के सगी-साथी मित्र भी इन्ही जैसे खेल-प्रेमी, घूमने-फिरने के इच्छुक तथा सदैव आमोद-प्रमोद मे उत्सुक रहने वाले थे।

(३६)

(उपजातिच्छन्द)

उत्साहसम्पन्न-सुहृद्वरास्ते,
गोष्ठी-समारोह-जनोत्सवेषु ।
परस्परप्रीतिविनोदयुक्ता ,
अवश्यमेतेन सहान्वगच्छन् ।।

अर्थ कोई भी गोष्ठी, समारोह या उत्सव-मेला आदि होता, उसमे वे सभी उत्साही मित्र परस्पर प्रीति व विनोद करते हुए श्री रामजीलाल के साथ अवश्य जाते थे।

(३७)

(वसन्ततिलकाछन्द)

सामायिकादिषु च धार्मिक-सत्क्रियासु,
नाद्य प्रभृत्यपि तदीयरुचि प्रजाता।
श्रीरामलालहृदये स्वत एव किन्तु,
श्रद्धाप्रधान-विनयादिगुणा प्ररूढा ।।

अर्थ यद्यपि श्री रामजीलाल को सामायिक आदि धार्मिक क्रियाओ मे अभी तक कोई रुचि नही हो पाई थी, किन्तु उनके हृदय मे श्रद्धा, विनय आदि सद्‌गुण स्वत प्रकट/आविर्भूत हो गए थे।

(३८)

(उपजातिच्छन्द)

पूज्यान्समस्तान् परिवारवृद्धान्,
ग्रामे निजे सत्पुरुषप्रधानान्।
प्रशस्तसस्कारवशात्सदैव,
प्रभातकाले प्रणतोऽभवत्स ।।

अर्थ श्री रामजीलाल प्रात काल अपने उत्तम सस्कारो के कारण, हमेशा अपने समस्त पूज्य पारिवारिक बडे-बूढो को तथा अपने ग्राम के प्रमुख सज्जनो को प्रणाम करते थे।

(३९)

(उपजातिच्छन्द)

पप्रच्छुरेन च यदा सुवृद्धा,
यदस्ति लाभस्तव क प्रणत्या ?
प्रत्युक्तवान्सोऽपि यदस्ति मान्या,
मन सुतोषाय मम प्रणाम ।।

अर्थ जब कभी बडे-बूढे लोग श्री रामजीलाल से पूछ बैठते कि आखिर 'प्रणाम' करने से तुझे क्या लाभ होता है ? तो वे उत्तर देते कि मान्यवर ! प्रणाम करने से मुझे मन की तुष्टि मिलती है।

(४०)

(उपेन्द्रवज्राछन्द)

ममादर वृद्धजनान् प्रति स्वम्,
अभिव्यनज्मि प्रणता यदाऽहम् ।
अवश्यमेवानुभवामि मद्य,
कृतज्ञता-भार-विमुक्तिमन्त ।।

अर्थ (वे यह भी कहते कि) जब मै बडे-बूढो को प्रणाम कर उनके प्रति अपना आदर भाव व्यक्त करता हू, तभी मुझे अवश्य ही अपने अन्दर ऐसा अनुभव होता है कि 'कृतज्ञता' सम्बन्धी भार से मै मुक्त हो रहा हू।

(८१)

(शिखरिणीछन्द)

जनास्थान्या, स्थाने जननिवहपूर्णे च यदि वा,
प्रयात मन् साय मनसि कुरुते चिन्तनमिदम् ।
क्व ससार प्रायो जिगमिषति वेगेन परित,
किमुद्देश्य का वा गमन-परिसीमाऽस्य जगत ।।

अर्थ श्री रामजीलाल कभी शाम को चौपाल पर या फिर किसी भीड भरे स्थान पर चले जाते ता वे प्राय मन मे इस प्रकार चिन्तन किया करते थे—द्रुत गति से यह ससार कहा जाना चाह रहा है? इसका क्या उद्देश्य/लक्ष्य है? इस ससार की गति की आखिरी सीमा क्या है?

(८२)

(उपजातिछन्द)

जना यदा मृत्युमुखे प्रयान्ति,
धनादिक याति कथ न सार्द्धम् ।
न याति तत्किन्तु, पुन किमर्थम्,
खिद्यन्त एव धनसग्रहार्थम् ।।

अर्थ (वे प्राय सोचते कि) लोग जब मौत के मुख मे चले जाते हैं तो उनके साथ उनका धन आदि क्यो नही जाता? किन्तु यह सच है कि मृत व्यक्ति के साथ कुछ नही जाता तो फिर लोग धन के सग्रह मे इतनी तकलीफ क्यो पाते हैं?

(मन्दाक्रान्ताछन्द) (४३)

जैनाराध्या श्रमण-निवहेऽत्यन्तसम्मानभाज ,
मायारामा स्वपरसुखदश्रेयमे सप्रवृत्ता ।
धर्मोन्नत्यै शुभमयचतुर्मासवास 'बडौदा'-
ग्रामे कर्तु प्रमुखमनुजा प्रार्थयस्तान् मुनीन्द्रान् ।।

अर्थ जैन समाज के आराध्य देव, श्रमण-समाज मे अत्यधिक सम्मान के पात्र, तथा स्व-पर-कल्याण मे प्रवर्तमान पूज्य मुनि श्री मायाराम जी महाराज के पास 'बडौदा' गाव के प्रमुख लोगो ने प्रार्थना की कि वे अपना शुभ चातुर्मास इस गाव मे करे ताकि धर्म की उन्नति हो। (ज्ञातव्य है, इन महामुनि का जन्म भी इसी बडौदा ग्राम मे हुआ था।)

(४४)

(शार्दूलविक्रीडितछन्द)

चातुर्मासनिजप्रवासविषये ते तत्र साधूत्तमा ,
ग्रामीणप्रमुखाग्रहेण मनसा प्रादुर्निजा सम्मतिम् ।
अश्वर्तग्रहभूमिते मुनिवरैस्तैर्विक्रमाब्दे शुभे,
ग्रामेऽस्मिन् विहिता निजाद्भुत-चतुर्मासस्थितिर्योगिभि ।।

अर्थ गाव के प्रमुख लोगो के आग्रह को दृष्टिगत रखकर उन पूज्य मुनिवर्य श्री मायाराम जी महाराज ने 'चातुर्मास' के लिए मन से अपनी सम्मति दे दी। (इस प्रकार) महामुनि का इस गाव मे वि० स० १९६८ मे चातुर्मास हुआ जो धर्म-प्रभावना की दृष्टि से अद्भुत रहा।

(४५)

(उपजातिच्छन्द)

जातश्चतुर्मास-निवास एषाम्,
ग्रामेतिहासेऽनुपमस्तदानीम् ।
अतर्पयस्तत्र जनान् मुनीन्द्रा,
धर्मोपदेशामृतबिन्दुभिस्ते ।।

अर्थ इन पूज्य श्री मायाराम जी महाराज का इस गाव मे तब जो चातुर्मास हुआ, वह ग्राम के इतिहास मे अद्वितीय रहा। मुनिश्री ने (भी) अपने धर्मोपदेश रूप अमृत-बिन्दुओ से लोगो को तृप्त किया।

(४६)

(उपजातिच्छन्द)

न्यवेदयन्साधुवरान् कदाचित्
केचित्सुभक्ता विनयेन नम्रा ।
यदत्र भावत्क-पदार्पणेन,
शुभेन जाताऽधिकधर्मवृद्धि ।।

अर्थ एक बार कुछ श्रद्धालु भक्तो ने विनय के साथ मुनिश्री जी को यह निवेदन किया–"महाराज! इस गाव मे आपका जो पदार्पण हुआ है, उससे धर्म की वृद्धि अत्यधिक हुई है।"

(४७)

(उपजातिच्छन्द)

केचिद् युवानोऽत्र भवन्ति धर्म-
ध्यानादिसत्कर्मपराङ्मुखा ये ।
कियच्छुभ स्याद्यदि धर्मनिष्ठा,
भवत्सुवाण्योपकृता स्युरेते ।।

अर्थ (किन्तु) ''इस गाव मे कुछ ऐसे भी युवा लोग है, जो धर्म-ध्यान आदि सत्क्रियाओ से विमुख हैं । कितना ही अच्छा होता, यदि आपके श्रेष्ठ वचनो से वे उपकृत हो जाते और धर्मनिष्ठा उनमे पैदा हो जाती ।''

(४८)

(वसन्ततिलकाछन्द)

सद्वशज 'सुखदयाल'-सुपुत्र एव,
श्री'रामलाल'-इतिनामसुलब्धकीर्ति ।
ग्रामाधिवासि-तरुणप्रमुखोऽस्ति, मान्या,
नून समे समनुयान्ति युवान एतम् ।।

अर्थ ''महाराज! ग्राम मे रहने वाले जो तरूण लोग हैं, उनका मुखिया 'रामजीलाल' नाम से प्रसिद्ध युवक है, जो सत्कुलीन तथा चौधरी सुखदयाल का सुपुत्र है। सभी तरुण लोग इसीके पीछे-पीछे चलने वाले हैं।''

(४९)

(उपजातिच्छन्द)

ग्रामे स मान्या भवदीयवाण्या,
प्रभावितो धर्मरुचिर्यदि स्यात् ।
यूना च धर्मे सुरुचि समेषाम्,
नून तत क्षेत्रजनोपकार ।।

अर्थ "महाराज ! गाव मे आपकी वाणी से वह (रामजीलाल) यदि प्रभावित हो जाय और उसकी रुचि धर्म मे हो जाय तो यह निश्चित है कि सभी युवा लोगो की धर्म मे रुचि हो जाएगी और फलस्वरूप सारे क्षेत्र व यहा के निवासियो का उपकार होगा।"

(५०)

(इन्द्रवज्राछन्द)

तद्ग्रामवासिप्रमुखानुरोधम्,
आकर्ण्य सम्यक् मुनितल्लजास्ते ।
प्रत्युक्तवन्त स्मितहास्यपूर्वम्,
द्रक्ष्याम एन तरुण कदाचिद् ।।

अर्थ इस प्रकार उन ग्रामवासी प्रमुख लोगो के अनुरोध को अच्छी तरह सुनकर वे मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज थोडा मुस्कराये और उन्होने उत्तर दिया—कभी इस युवक को देखेगे।

(५१)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

ग्रामेऽस्मिन् सुकृतोदयात् सुविचरन् श्रीरामलाल पथि,
मायाराम-मुनीश्वरान् विहरत सद्दृष्टवानेकदा ।
यूना तेन च वन्दिता मुनिवरा, पृष्ट च तै 'कोऽसि भो '
दत्तस्तेन निजात्मन परिचयस्तेषा मुनीना पुर ।।

अर्थ पुण्योदय से इस गाव मे घूमते हुए श्री रामजीलाल को एक बार मार्ग मे विहार करते हुए पूज्य मुनि श्री मायाराम जी महाराज दिखाई पडे । युवक रामजीलाल ने मुनि श्री को वन्दना की । मुनि श्री ने पूछा—तुम कौन हो ? तब श्री रामजीलाल ने उन मुनिवरो के समक्ष अपना परिचय दिया ।

(५२)

(वसन्ततिलकाछन्द)

लब्ध्वा च तत्परिचय मुनिवृन्दवर्या,
चित्ते निजे सुपरितोषमवाप्नवन्त ।
तै सस्मृत च यदसौ प्रवरो युवैव
प्राय समै सुपुरुषैरिह चर्चितोऽस्ति ।।

अर्थ पूज्य मुनिवर्य श्री मायाराम जी महाराज ने उस युवक का परिचय प्राप्त किया, तो वे अपने मन मे अत्यधिक सतुष्ट हुए। उनको स्मरण हो आया था कि सभी सज्जन लोग इसी श्रेष्ठ युवक की चर्चा किया करते है ।

(५३)

(उपजातिच्छन्द)

समब्रुवस्त तरुण मुनीन्द्रा ,
स्वस्त्यस्तु ते धर्मरुचि सदा स्यात् ।
युष्मादृशा माहमिनो बलिष्ठा ,
एवात्र धर्मोद्धरणे समर्था ।।

अर्थ मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज ने उस युवक रामजीलाल को कहा—''तुम्हारा कल्याण हो और तुम्हारी रुचि, धर्म मे सदा बनी रहे। तुम्हारे जैसे साहसी व बलवान् व्यक्ति ही धर्म का उद्धार करने मे सक्षम होते है।''

(५४)

(उपजातिच्छन्द)

परम्परा सास्कृतिकी स्वदेशे,
पुरातनी रक्षितुमद्य भद्र ।
युष्मादृशाना युवकोत्तमानाम्,
स्कन्धेषु भारो महनीय एव ।।

अर्थ ''हे भद्रपुरुष! अपने देश मे चली आ रही प्राचीन सास्कृतिक परम्परा को सुरक्षित रखने का महनीय भार तुम्हारे जैसे उत्तम युवको के ही कन्धो पर है।''

(५५)

(इन्द्रवज्राछन्द)

यूना समाकर्ण्य वचो मुनीनाम्,
जिज्ञासित यन्मुनयो ब्रुवन्तु।
क्व सस्कृति, क्व च परम्पराऽस्ति,
कश्च स्वधर्म, कथमस्य रक्षा।।

अर्थ युवक रामजीलाल ने मुनिराज का कथन सुना तो उन्होने जिज्ञासा प्रकट की—"हे मुनिराज! आप बताए, सस्कृति क्या है? कौन-सी परम्परा है? हमारा धर्म क्या है? तथा इसकी रक्षा किस प्रकार की जा सकती है?"

(५६)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामलाल युवक मुनीन्द्रा,
ऊचुर्यदायाहि मदन्तिके त्वम्।
जिज्ञासित सम्प्रति यत् त्वया, तत्,
समाहित भद्र! भविष्यतीति।।

अर्थ मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज ने युवक रामजीलाल को कहा—"तुम मेरे पास आना। तुमने अभी जो जिज्ञासा प्रकट की है, हे भद्र! उस सबका समाधान तुम्हे प्राप्त हो जाएगा।"

(उपजातिच्छन्द)

ततो विनीतस्तरुणोऽब्रवीत्स ,
मुनीन्द्रपादाब्जयुगे प्रणम्य ।
शीघ्र भवद्दर्शनहेतवेऽहम्,
समागमिष्यामि मुनीन्द्रवर्या ।।

अर्थ उस तरूण रामजीलाल ने विनीत भाव से मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज के चरण-कमलो मे वन्दना की और कहा कि हे मुनिराज! मै यथाशीघ्र आप श्री के दर्शन हेतु आऊगा।

(५८)

(उपजातिच्छन्द)

स्वस्थानमायान् मुनिराज गते,
युवाऽपि स प्रस्थितवान् स्वगेहम् ।
परन्तु तस्योत्सुकता तदानीम्,
मुनेर्वचोभि समजन्यपूर्वा ।।

अर्थ मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज अपने स्थान पर पधारे और युवक रामजीलाल भी अपने घर की ओर चल पडे। किन्तु मुनि श्री के वचनो से उनके मन मे उस समय एक अपूर्व उत्सुकता पैदा हो गई थी।

(५९)

(उपजातिच्छन्द)

अन्तर्मुख तस्य मन प्रजातम्,
मुनीश्वराणा प्रतिबोध-वाक्यै ।
आध्यात्मिक चिन्तनमारभत्स ,
मुनीन्द्रवर्यस्य वचोऽनुसृत्य ।।

अर्थ मुनि श्री मायाराम जी महाराज के प्रतिबोधक वचनो से उन युवक रामजीलाल का मन अन्तर्मुख हो गया था। उन्होने मुनिश्री के वचनो के अनुरूप आध्यात्मिक चिन्तन प्रारम्भ कर दिया।

(६०)

(उपजातिच्छन्द)

अन्येद्युरेवोत्सुक-रामलाल ,
मुनीश्वराणा सविधे प्रयात ।
धर्मोपदेश श्रुतवान्, ततोऽस्य,
विरक्तिभावो दृढता प्रपेदे ।।

अर्थ उत्सुकता-वश रामजीलाल, दूसरे दिन ही मुनि श्री के पास पहुच गए। उनका धर्मोपदेश सुना तो इनके वैराग्य मे और भी दृढता आई।

(६१)

(उपजातिच्छन्द)

सोऽचिन्तयद्यज्जगत सुखानि,
त्याज्यानि, यस्माद्धि विनश्वराणि ।
न तैश्च तृप्ति परमा कदाचिद्,
अतृप्तजीवस्य सुख कथ स्यात् ।।

अर्थ वे (रामजीलाल) सोचने लगे—"ससार के सुख चूकि विनाशशील है, इसलिए त्याज्य हैं। इन (सुखो) से कभी परम (पूर्ण) तृप्ति भी नही होती और अतृप्त प्राणी को सुख आखिर कैसे प्राप्त हो सकता है?"

(६२)

(उपजातिच्छन्द)

ये कामभोगा सकला जगत्याम्,
शरीरचित्तेन्द्रिय-निर्भरास्ते ।
विना शरीरादिक-सुस्थता क,
भोगेऽसमर्थो न भवत्यतृप्त ।।

अर्थ "ससार मे जितने सारे काम-भोग है, वे शरीर, मन व इन्द्रियो के आधीन हैं, इसलिए शरीर आदि की स्वस्थता जब नही होती तो प्राणी भोग मे असमर्थ रहता है और इस प्रकार वह अतृप्त रहता है।"

(६३)

(उपजातिच्छन्द)

ऐकान्तिक नित्यमनश्वर च,
सुखन्तु मोक्षेऽस्ति, न ससृतौ तु ।
स मोक्षमार्गश्च निवृत्तिरूप,
इत्यादिशन् साधुवरा सुसम्यक् ।।

अर्थ "ऐकान्तिक (पूर्णशुद्ध), नित्य व अविनाशी सुख तो मोक्ष मे (ही) है, ससार मे तो वह प्राप्त हो नही सकता। उस मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग निवृत्ति-परक है"—ऐसा मुनि श्री ने जो बताया, वह समीचीन (ही) था।

(६४)

(उपजातिच्छन्द)

मनुष्य- जन्मन्यति -दुर्लभेऽस्मिन्,
कुर्वन्ति निन्द्य विषयाभिलाषम् ।
सप्राप्य नून सुमहार्घ्यरत्नम्,
क्षिपन्त्यपारे जलधौ सुमूढा ।।

अर्थ "इस अत्यन्त दुर्लभ मानव-जन्म मे भी जो लोग विषय-भोग की निन्दित इच्छा करते हैं, वे अत्यन्त मूढ लोग (मानो) अत्यधिक मूल्यवान् रत्न को (पाकर भी) अपार समुद्र के बीच फेक देते हैं।"

(६५)

(उपजातिच्छन्द)

मनो नराणा सुख-दु खहेतु ,
मनोविकारा खलु दु ख-भूमि ।
सत्य-क्षमा-मार्दव-सयमादि-
मन स्वभावा सुख-साधनानि ।।

अर्थ "वास्तव मे मनुष्यो का मन ही उनके सुख या दु ख का कारण बन जाता है। मन के (राग-द्वेष आदि) विकार ही दु ख के उत्पत्ति-स्थान है तथा सत्य, क्षमा, मृदुता, सयम आदि मानसिक भाव ही सुख के साधन होते हैं।"

(६६)

(इन्द्रवज्राछन्द)

धन्योऽस्म्यह यन्नर-जन्म लब्ध्वा,
सप्राप्तवान् सन्मुनि-साहचर्यम् ।
सौभाग्यमेतत् परम च मन्ये,
धर्मोपदेश-श्रवण सुलभ्यम् ।।

अर्थ "मैं कितना धन्य हू जो मुझे मनुष्य-जन्म मिला और (साथ ही) उत्तम मुनिराज की सत्सगति भी प्राप्त हुई। इसे तो मै अपना और भी अधिक सौभाग्य मानता हू जो मुझे धर्मोपदेश के श्रवण का अवसर प्राप्त हुआ है।"

(६७)

(उपजातिच्छन्द)

विचिन्तयन्नेवमय स्वगेहम्,
प्रत्यागतोऽभूत् कृतनिश्चयोऽपि ।
स्वजन्मसाफल्यमवाप्तुकाम ,
भवाम्यह सयममार्गनिष्ठ ।।

अर्थ उक्त प्रकार मे वे रामजीलाल सोचते हुए अपने घर लौट आये, किन्तु उन्होने यह निश्चय कर लिया था कि "मैं अपने जन्म को सफल बनाने के लिए सयम के मार्ग मे स्थित होऊगा।"

(६८)

(उपजातिच्छन्द)

मनीश्वरा पूज्यवरा यथैते,
आसक्तिहीना अपरिग्रहाश्च ।
परस्वकल्याणरतास्तथैव,
सुसयमस्थो भवितु यतिष्ये ।।

अर्थ "जैसे ये पूज्य मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज आसक्ति व परिग्रह से रहित हैं, और अपने व दूसरो के कल्याण मे सलग्न हैं, उसी प्रकार मैं भी सम्यक् सयम धर्म मे स्थित होने का यत्न करूगा।"

(६९)

(उपजातिच्छन्द)

तत प्रभृत्येष विरक्तचित्त ,
मुनीश्वराणा सविधे विनीत ।
तान् वन्दितु प्रत्यहमेव याति,
श्रोतु तथा धर्मशुभोपदेशम् ।।

अर्थ इसी दिन से रामजीलाल का चित्त विरक्त हो गया और वे नित्य विनय-युक्त होकर मुनि श्री को वन्दना करने के लिए तथा उनका शुभ धर्मोपदेश सुनने के लिए जाते थे।

(७०)

(उपजातिच्छन्द)

श्रामण्यदीक्षार्थमसौ निजेच्छाम्
प्राचीकटत् तन्मुनिवर्यपार्श्वे ।
पर तदीया परिवार-वृद्धा ,
ददु स्वकीयानुमति न तस्मै ।।

अर्थ मुनि श्री मायारामजी के समक्ष रामजीलाल ने मुनि-दीक्षा ग्रहण करने की अपनी इच्छा प्रकट की किन्तु उनके परिवारजनो व वृद्धो ने उन्हे अपनी अनुमति नही दी।

(७१)

(उपजातिच्छन्द)

इत स्वकल्याणमभीप्सुरेष,
विरक्ति-मार्गे गमनोद्यतोऽभूत्।
पर तदीयै परिवार-वृद्ध,
स्ववश-वृद्ध्यै खलु चिन्त्यते स्म ।।

अर्थ इधर तो ये युवक रामजीलाल अपने आत्म-कल्याण के इच्छुक होते हुए विरक्ति-मार्ग पर चलने को तैयार थे, किन्तु (दूसरी ओर) उनके परिवार के बडे लोग वश-वृद्धि कैसे हो सके, इस बारे मे सोच रहे थे।

(७२)

(उपजातिच्छन्द)

विरक्तिभाव सुनिरीक्ष्य जात,
चिन्तातुरस्तस्य कुटुम्बिवर्ग ।
तैश्चिन्तित यत्स गृहानुरक्त,
पुनर्विवाहेन भवेत् कथचित् ।।

अर्थ युवक रामजीलाल जी के वैराग्य भाव को अच्छी तरह जब परिवार के लोगो ने देखा तो वे चिन्तामग्न हो गए। उन्होने सोचा—यदि किसी प्रकार इनका पुनर्विवाह कर दिया जाय तो इनकी अनुरक्ति घर की ओर हो सकती है।

(७३)

(उपजातिच्छन्द)

अत्रान्तरे साधुवराश्च माया-
रामाभिधा ग्रामवरादमुष्मात्।
व्यतीत्य मासाश्चतुर सुखेन,
सप्रस्थिता अन्यजनोपकृत्यै।।

अर्थ इसी बीच, मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज ने सुखपूर्वक अपना चातुर्मास पूर्ण कर अन्य लोगो के उपकार की इच्छा से इस (बडौदा) ग्राम से विहार कर दिया।

(७४)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामलालो गुरुवर्यसाधून्,
धर्मोपदेश च सदैव तेषाम्।
अनुस्मरन् चिन्तयति स्म धीमान्,
कषाय-मान्द्य च ततोऽस्य दृष्टम्।।

अर्थ बुद्धिमान् श्री रामजीलाल जी अपने पूज्य गुरु श्री मायाराम जी महाराज तथा उनके धर्मोपदेश को निरन्तर स्मरण करते रहते और साथ-साथ चिन्तन भी करते थे। फलस्वरूप उनके कषायो मे मन्दता दृष्टिगोचर होने लगी थी।

(७५)

(उपजातिच्छन्द)

सम्यक्त्व-वैराग्य-मुमुक्षुभाव-
बीजानि पूज्यैर्गुरुसाधुवर्यै ।
उप्तानि यूनोऽस्य मन स्थितानि,
तान्याशु तत्राकुरितान्यभूवन् ।।

अर्थ इन युवा रामजीलाल के मन मे पूज्य गुरुवर मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज ने सम्यक्त्व, वैराग्य व मुमुक्षु भाव के जो बीज बो दिए थे, वे शीघ्र अकुरित होने लगे ।

(७६)

(उपजातिच्छन्द)

क्रीडासु गोष्ठीषु मनोविनोदे,
श्रीरामलालस्य रुचि प्रणष्टा ।
कुटुम्बिवृद्धैरनुरोधितोऽपि,
पुनर्विवाहे न मति व्यधात्स ।।

अर्थ श्री रामजीलाल की क्रीडाओ, गोष्ठियो तथा मनोविनोद मे रुचि नष्ट हो गयी । परिवार के बडे लोग उनसे बार-बार अनुरोध करते किन्तु उन्होने पुनर्विवाह की इच्छा नही की ।

(७७)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

रन्ध्रर्तुग्रहभूमिसमितसमा श्रीविक्रमीयाऽऽगता,
मायाराममुनीश्वरा गुरुवरा श्रीरामलालस्य ते ।
वैराग्य-प्रतिबोधका बत जगत्कल्याणकार्योद्यता,
भक्तान् सर्वजनान् विहाय, सुदिव याता भिवानी-पुरि ।।

अर्थ श्री रामजीलाल जी को वैराग्य का उद्‌बोधन देने वाले पूज्य श्री गुरुवर मायाराम जी महाराज, जो ससार के कल्याण मे उद्यत रहते थे, भिवानी नगरी मे सभी भक्त जनो को छोडकर वि० स० १९६९ मे स्वर्ग सिधार गए ।

(७८)

(उपजातिच्छन्द)

दिवगता पूज्यवरा मुनीशा ,
आकर्ण्य चैतत्खलु रामलाल ।
खिन्नोऽपि सुस्थोऽभवदेष शीघ्रम्,
अनित्यता-भावनया कथचित् ।।

अर्थ श्री रामजीलाल जी ने जब यह सुना कि पूज्यवर गुरुमुनि श्री जी दिवगत हो गए है तो वे खिन्न हुए, किन्तु वे अनित्य भावना का चिन्तन करते हुए, शीघ्र स्वस्थ हो गए ।

(७९)

(इन्द्रवज्राछन्द)

दुर्दैव ऐच्छद्यदमुष्य नित्यम्,
ता एव दृश्या घटना भवेयु ।
उत्पादयेरन् युवकस्य चित्ते,
आजीवनस्थायि विरक्ति-भावम् ।।

अर्थ दुर्भाग्य तो यह चाह रहा था कि इन युवा रामजीलाल के सामने हमेशा ऐसी ही घटनाए दृष्टिगोचर होती रहे जिनसे इनके मन मे जीवन पर्यन्त रहने वाले वैराग्य का प्रादुर्भाव होता रहे।

(८०)

(इन्द्रवज्राछन्द)

कालक्रमेणास्य पिता च माता,
ज्येष्ठ पितृव्यश्च सभार्य एव ।
दुर्दैववाञ्छामनुसृत्य सर्वे,
वर्षद्वये तस्य दिव प्रयाता ।।

अर्थ दर्दैव की उक्त इच्छा के अनुकूल ही, दो वर्षो के भीतर काल-क्रम मे इनके पिता, माता, ताऊ तथा ताई—सभी दिवगत हो गए।

(८१)

(इन्द्रवज्राछन्द)

आस्ता तदीये सकले कुटुम्बे,
द्वावेव मर्त्यौ धृतजीवनौ यौ।
श्रीरामलालोऽस्त्यपरस्तु कन्हे-
राम पितृव्यप्रवरोऽस्त्यनूढ ।।

अर्थ अब इन रामजीलाल जी के सारे परिवार मे दो ही व्यक्ति जीवित बच रहे। एक तो स्वय श्रीरामजीलाल जी, दूसरे चाचा श्री कन्हाराम जी जो अविवाहित थ।

(८२)

(उपजातिच्छन्द)

शुभेच्छुका वृद्धजना समस्ता,
पितृव्यवर्यश्च पुन पुनस्तम्।
श्रीरामलाल सुपरामृशन्त,
विवाह-हेतो कथयाम्बभूवु ।।

अर्थ श्री रामजीलाल को उनके शुभेच्छु समस्त बडे-बूढो ने तथा चाचा जी ने भी विवाह करने के लिए परामर्श देते हुए इस प्रकार कहा —

(८३)

(उपजातिच्छन्द)

चराचर-स्वीय-कुटुम्बसम्पद्-
भोगाय सन्तान-परम्पराया ।
प्रवर्तना नूनमपेक्षिताऽस्ति,
कुरुष्व नैज त्वमतो विवाहम् ।।

अर्थ "परिवार की चल-अचल निजी सम्पत्ति को उपभोग करने के लिए निश्चय ही यह अपेक्षित होता है कि सन्तान की परम्परा निरन्तर चलती रहे, इस दृष्टि से तुम अपना विवाह कर लो।"

(८४)

(इन्द्रवज्राच्छन्द)

वैराग्यभावेन दृढेन किन्तु,
मुक्त स आसीत्खलु रामलाल ।
श्रामण्य-दीक्षा-रमणी विहाय,
नैच्छत्स चित्ते परिणेतुमन्याम् ।।

अर्थ श्री रामजीलाल जी को दृढ वैराग्य हो चुका था। वे मन से श्रमण-दीक्षा रूपी रमणी को छोड कर किसी अन्य (सासारिक) स्त्री से विवाह करना नही चाहते थे।

(८५)

(उपजातिच्छन्द)

पूज्याग्रणीना मुनिवर्य - माया-
रामाभिधाना च लघिष्ठशिष्य ।
आसीत् सुखीराम-सुनामधारी,
तपस्विसाधुप्रवर प्रसिद्ध ।।

अर्थ पूज्य जनो मे अग्रणी मुनि श्री मायाराम जी महाराज के सबसे छोटे शिष्य मुनि श्री सुखीराम जी थे जो सयमी साधुओ मे श्रेष्ठ रूप से प्रसिद्ध थे।

(८६)

(इन्द्रवज्राच्छन्द)

दिल्लीनगर्या शुभविक्रमाब्दे,
चन्द्राश्वरन्ध्रेन्दुमिते समायान् ।
ते 'चादनी चौक'-इतिप्रसिद्धे,
क्षेत्रे चतुर्मास-निवासकाम ।।

अर्थ मुनि श्री सुखीराम जी महाराज वि० सवत् १९७१ मे दिल्ली नगर के प्रसिद्ध चादनी चौक क्षेत्र मे चातुर्मास हेतु विराजित थे।

(८७)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामलालोऽपि विरक्तचित्त,
तेषा सुखीराम-मुनीश्वराणाम्।
गतोऽन्तिके तच्छरणेच्छुक सन्,
जगत्परावर्तभयान्मुमुक्षु ।।

अर्थ विरक्त मन वाले श्री रामजीलाल ससार के परावर्तो से मुक्त होना चाहते थे, अत वे मुनिराज श्री सुखीराम जी महाराज की शरण की इच्छा से उनके पास चले गए।

(८८)

(उपजातिच्छन्द)

मुनीश्वराणा सविधे समस्ताम्,
क्रियामजानाच्छ्रमणोचिता स।
श्रामण्यदीक्षोचित-पृष्ठभूमिम्,
आरोढुमिच्छा मनसि प्रधार्य।।

अर्थ उन श्री रामजीलाल ने मुनिराज श्री सुखीराम जी के पास रहकर साधुजनोचित समस्त क्रियाओ का परिचय प्राप्त किया, क्योकि उनकी मन मे यह इच्छा थी कि श्रमण-दीक्षा के लिए अपेक्षित पृष्ठभूमि प्राप्त कर ली जाए।

(८९)

(अनुष्टुब्छन्द)

चातुर्मासावधौ पूर्णे, सुखीरामा मुनीश्वरा ।
दिल्ल्या 'सदर बाजारे'त्याख्ये क्षेत्रे समागता ।।

अर्थ मुनिराज श्री सुखीराम जी अपना चातुर्मास का समय पूर्ण हो जाने पर दिल्ली के 'सदर बाजार' क्षेत्र मे पधारे ।

(९०)

(उपजातिच्छन्द)

क्षेत्रे तु तस्मिन् मुनिराज-सघ,
प्रपीडितोऽभूत्सहसा रुजैष ।
तत्सघमुख्या अपि ते मुनीशा,
रुग्णा प्रजाता, व्यथिताश्च भक्ता ।।

अर्थ इस क्षेत्र मे एकाएक इन मुनिराज का सघ, रोग से पीडित हो गया । सघ-प्रमुख मुनिराज श्री सुखीराम जी भी रुग्ण हो गए, जिससे भक्तो को बडा कष्ट हुआ ।

(९१)

(उपजातिच्छन्द)

श्रामण्यदीक्षोत्सुक-रामलाल,
मुनीशपादाब्जयुग प्रणम्य।
विज्ञाय सप्रार्थनयोग्यकालम्,
न्यवेदयन्नम्रतया निजेच्छाम्।।

अर्थ मुनिदीक्षा के लिए श्री रामजीलाल जी उत्सुक तो थे ही, उन्होंने अपनी प्रार्थना का उचित अवसर समझ कर, मुनिराज श्री सखीराम जी महाराज के चरण-कमलों में वन्दना की और नम्रता के साथ अपनी इच्छा को (इस प्रकार) निवेदन किया।

(९२)

(उपजातिच्छन्द)

भावत्क-सान्निध्यमवाप्य धन्य,
भवाम्यहं पूज्यवर मुनीश!
अनुग्रहो मय्यधिकस्तदा स्यात्
दीक्षा प्रदीयेत यदाऽद्य मह्यम्।।

अर्थ "हे पूज्यवर मुनिराज! आपका सान्निध्य पाकर तो मैं धन्य हो गया हूं। आपका मेरे ऊपर और भी अधिक अनुग्रह हो यदि आप मुझे दीक्षा प्रदान करें।"

(९३)

(वसन्ततिलकाच्छन्द)

पूज्यैर्भवद्गुरुभिरत्र मुनीन्द्र-'माया-
रामै'र्मयि प्रणिहित च विरक्ति-बीजम् ।
तत्साम्प्रत भवदनुग्रहतो विशेष-
साफल्यमाप्स्यति शुभाय, न सशयोऽत्र ।।

अथ आपके ही पूज्य गुरुवर मुनिराज श्री मायाराम जी महाराज ने मेरे अन्तस् मे विरक्ति का जो बीज डाल दिया था, वह यदि अभी आपका अनुग्रह प्राप्त हो जाय तो सफल हो जाएगा इसमे कोई सन्देह नही है।"

(९४)

(वसन्ततिलकाच्छन्द)

आपत्तिदु खबहुलानि च नश्वराणि,
सासारिकानि बहुयोनिषु जीवनानि ।
सावद्य-पूर्णविरति श्रमणत्व-दीक्षाम्,
त्यक्त्वा न किञ्चिदपि शाश्वतसौख्यदायि ।।

अर्थ "विविध योनियो मे जितने भी सासारिक जीवन हैं, वे (स्त्री) आपत्ति व दु खो से भरे हुए हैं तथा विनाशशील भी है। समस्त सावद्य कार्यों से पूर्णविरक्ति-रूप मुनि-दीक्षा को छोडकर कोई भी ऐसा (साधन) नही है जो शाश्वत सुख को प्रदान करा सके।

(९५)

(उपजातिच्छन्द)

आलम्ब्य दीक्षा भवदीय-सघे,
भवामि मर्वेषु मनि कनीयान् ।
कियत्सुख मे, यदि सर्वसाधु-
सेवा-मयोग च लभेऽत एव ।।

अर्थ ' मुझे दीक्षा मिल जाए तो मै आपके मुनि-सघ मे सभी म छोटा मुनि होऊगा। (तब) कितनी मेरे लिए सुख की बात होगी कि इसी (छोटे होने के) कारण सभी साधुओ की सेवा करने का सुयोग यदि मै प्राप्त करूगा।"

(९६)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामलालस्य च हार्दभावम्
श्रुत्वा मुनीन्द्रा मनसि प्रतुष्टा ।
तथाऽनुकम्पा समजन्यतस्तै,
प्रादायि दीक्षानुमतिश्च तस्मै ।।

अर्थ श्री रामजीलाल जी की हार्दिक भावना को सुन कर मुनिराज श्री सुखीराम जी मन मे परम सन्तुष्ट हुए। उन्हे उन पर अनुकम्पा भाव जागा और उन्होने श्रीराम जी लाल को दीक्षा देने की अपनी अनुमति दे दी।

(९७)

(इन्द्रवज्राच्छन्द)

चन्द्राश्वरन्ध्रेन्दुमिते शुभाब्दे,
श्री विक्रमीये शुभमार्गशीर्षे ।
या कृष्णपक्षस्य चतुर्दशी सा,
दीक्षातिथिस्तैरपि घोषिताऽभूत् ।।

अर्थ उन मुनिराज ने विक्रम सवत् १९७१ के मार्गशीर्ष मास के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तिथि को दीक्षातिथि के रूप मे घोषित भी कर दिया ।

(९८)

(इन्द्रवज्राच्छन्द)

स्थान च निर्णीतमभून्मुसद्दी-
लालस्य याऽऽसीदिह धर्मशाला ।
दीक्षोत्सवस्यापि सुयोजनायै
सप्रेरितो जैनसमाज एभि ।।

अर्थ इस क्षेत्र की जो मुसद्दीलाल जी की धर्मशाला थी, उसे दीक्षा-स्थल के रूप मे निर्णय किया गया । मुनि श्री ने दीक्षा-उत्सव के सही आयोजन के लिए भी जैन समाज को प्रेरित किया ।

(९९)

(उपजातिच्छन्द)

स्थानेऽत्र दिल्लीनगरे प्रसिद्धे,
शुभे दिने सनियते मुनीन्द्रा ।
आयोजनाडम्बरमप्युपेक्ष्य,
तस्मै प्रदत्ता श्रमणत्व-दीक्षा ।।

अर्थ प्रसिद्ध दिल्ली नगर के उक्त स्थान पर, नियत शुभ दिन मे आयोजन-सम्बन्धी आडम्बर की उपेक्षा करते हुए (अर्थात् सादगी के साथ) श्री रामजीलाल को मुनिराज श्री सुखीराम जी महाराज ने मुनि-दीक्षा प्रदान की।

(१००)

(इन्द्रवज्राच्छन्द)

'श्रीरामजीलाल'-इति प्रसिद्धा
सज्ञा तदानीमभवच्च तस्य।
जातोऽधुना प्रव्रजितो जनानाम्,
वन्द्य स साधु परमेष्ठिरूप ।।

अर्थ दीक्षा के अवसर पर उनका (नया) नाम श्री रामजीलाल' प्रसिद्ध हुआ। अब प्रव्रजित होने के अनन्तर, 'श्री रामजीलाल' परमेष्ठी साधु के रूप मे जन-जन के वन्दनीय हो गए।



(१०१)

(वसन्ततिलकाछन्द)

धन्य पिता 'सुखदयाल'-सुनामधारी,
'लाडो'-जनन्यपि च सा महिलासु धन्या।
यच्छ्रेष्ठसूनुरधुना मुनिता प्रपन्न,
इत्यादिकी समभवत्सुजनेषु चर्चा।।

अर्थ सत्पुरुषो मे चर्चा हो रही थी–धन्य हैं पिताश्री सुखदयाल जी, तथा महिलाओ मे 'लाडो' देवी माता भी धन्य हैं, जिनके इस श्रेष्ठ पुत्ररत्न ने अब 'मुनित्व' धारण किया है।

(१०२)

(वमन्ततिलकाछन्द)

अगीकृत परमवीरजनै सुसेव्यम्,
श्रामण्यजीवनवर स्वहितावह च ।
आजीवन समनुपालयितु प्रजाता ,
श्रीरामलालमुनय सुदृढप्रतिज्ञा ।।

अर्थ मुनिवर श्री रामजीलाल जी महाराज ने परम शूर-वीर जनो द्वारा सेवनीय/आचरणीय, स्वहितकारी व श्रेष्ठ श्रमण-जीवन को अगीकार कर, उसे आजीवन सम्यक् प्रकार से पालन करने की दृढ प्रतिज्ञा की ।

(१०३)

(वसन्ततिलकाछन्द)

निर्णीतमध्वनि निजे प्रमुख तदा तै ,
लक्ष्यत्रय कठिनसयमधर्मपूर्णे ।
स्वाध्यायकर्म, गुरुसाधुजनोपसेवा,
नि श्रेयसावह-तपोमयसाधना च ।।

अर्थ उन्होने उस समय कठिन सयम धर्म से भरे अपने मार्ग मे प्रमुखतया तीन लक्ष्य निर्धारित किये—(१) स्वाध्याय, (२) गुरुजनो व साधुओ की सेवा, तथा (३) मोक्षप्रद तपोमय योग-साधना ।

(१०४)

(वसन्ततिलकाछन्द)

संघे समस्त-मुनि-वृद्धजनान् सुभक्त्या,
पूज्यान् गुरूश्च सविशेष-समादरेण।
संसेवितुं समनुकूलतयोद्यतास्ते,
श्रीराममलालमुनय प्रथिता अभूवन्।।

अर्थ मुनि श्री रामजीलाल जी महाराज ने अपने संघ/गण मे भक्तिपूर्वक समस्त वृद्ध मुनियो की तथा विशेष आदर के साथ अपने पूज्य गुरुवर की अनुकूलता के साथ सेवा मे सदैव उद्यत रहते हुए प्रसिद्धि प्राप्त की।

(१०५)

(मन्दाक्रान्ताछन्द)

वैयावृत्त्य परम-महित, येन तीर्थकराख्यम्,
कर्म श्रेष्ठ समपलभते साधको नामगोत्रम्।
कुर्वन्तस्तन्मदविरहिता अन्तरग तपस्ते,
त्यक्तालस्या मुदितहृदया पर्युपास्तौ मुनीनाम्।।

अर्थ 'वैयावृत्त्य' का कार्य परम महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योकि इससे साधक तीर्थकर नामक नामगोत्र कर्म का उपार्जन करता है। उसी 'वैयावृत्त्य' नामक आभ्यन्तर तप का निरभिमानता के साथ अनुष्ठान करते हुए मुनि श्री रामजीलाल जी महाराज मुनियो की सेवा मे कभी आलस्य नही करते तथा प्रसन्नता अनुभव करते थे।

(१०६)

(वसन्ततिलकाछन्द)

क्षेत्रेषु भव्यजनतोपकरिष्णु - पूज्य-
साधूत्तमैर्गुरुवरै सह सञ्चरद्भि ।
सवत्सरा कतिपया मुनि-जीवनस्य,
तेषा व्यतीयुरनवद्यचरित्रभाजाम् ।।

अर्थ भव्य जन-समूह के उपकार के इच्छुक मुनिश्रेष्ठ गुरुवर श्री सुखीराम जी महाराज क्षेत्रो मे विचरण करते रहे और उनके साथ ही निर्मल चारित्र के धारी मुनिश्री रामजीलाल महाराज ने मुनि-जीवन के कुछ वर्ष बिताये।

(१०७)

(इन्द्रवज्राछन्द)

वार्धक्यभावै समय-प्रभावाद्,
रोगादिजाया असमर्थताया ।
पूज्यास्तदीया गुरवस्तथाऽन्ये,
केचिद् विहारे मुनयोऽप्यशक्ता ।।

अर्थ काल-प्रभाववश आई वृद्धता तथा रोगादि के कारण होने वाली असमर्थता के कारण पूज्य गुरुवर्य मुनिश्री सुखीराम जी महाराज तथा कुछ अन्य मुनिश्री भी विहार करने मे अशक्त हो चुके थे।

(१०८)

(उपजातिच्छन्द)

अस्या स्थितौ जैनसमाज-मुख्या ,
सप्रार्थयन् नम्रतया मुनीन्द्रान् ।
एकत्रवासाय सहेतुकाय,
मुनिर्णय पूज्यवरैर्विधेय ।।

अर्थ इस स्थिति मे, जैन समाज के प्रमुख लोगो ने नम्रतापूर्वक मुनिश्री सुखीराम जी महाराज से प्रार्थना की कि "आप पूज्यवर सकारण एक ही जगह निवास करने का निर्णय करे।"

(१०९)

(उपजातिच्छन्द)

एकत्रवासेन सहेतुकेन,
खेदो न, य सचरणादि-जन्य ।
धर्मक्रियास्वाकुलता न क्वचिद्,
निजान्य-कल्याण-सुसिद्धिरस्मात् ।।

अर्थ "सकारण एक ही जगह निवास करने मे, चलने-फिरने आदि के कष्ट नही होते, और धर्म-क्रियाओ मे आकुलता भी नही हो पाती, जिससे अपने व दूसरो के कल्याण करने मे सफलता प्राप्त होती है।"

(११०)

(उपजातिच्छन्द)

हर्याणके कुत्रचिदेव नित्यम्,
क्षेत्रे प्रकुर्वन्त यथेच्छवासम् ।
निरन्तर क्षेत्रविशेष एवम्,
धर्मोपदेष्टा च भवेत्सुलभ्य ।।

अर्थ "आप हरियाणा प्रान्त के किसी भी क्षेत्र मे यथेच्छ नित्य निवास करे। गसा करने से उम क्षेत्र-विशेष को बिना व्यवधान के गक महान् धर्मोपदेशक भी सुलभ हो जाएगा।"

(१११)

(उपजातच्छन्द)

मयुक्तियक्त बहुमानपूर्णम्
सामाजिकाना च वचो निशम्य ।
पज्ये सखीराम-महामनीन्द्रै
गकत्रवासानुमति प्रदत्ता ।।

अर्थ समाज के लोगो का युक्तियुक्त व अत्यन्त सम्मानपर्ण वचन सुनकर पूज्य मुनिराज श्री सुखीराम जी महाराज ने गक जगह निवास करने की अपनी अनुमति दे दी।

(११२)

(इन्द्रवज्राछन्द)

'हर्याणक'प्रान्तवरे स्थिताऽस्ति,
रम्या पुरी 'रोहतके' ति-नाम्नी ।
गुरुप्रवर्या इह 'बाबरे'ति-
क्षेत्रेऽवसस्ते स्थविरास्तथाऽन्ये ।।

अर्थ 'हरियाणा' नामक श्रेष्ठ प्रान्त मे 'रोहतक' नाम की सुन्दर नगरी है। वही 'बाबरा' नामक क्षेत्र (मुहल्ले) मे वे गुरुवर तथा अन्य स्थविर मुनिजन निवास करने लगे।

(११३)

(उपजातिच्छन्द)

चिरोषित स्थानपतित्वमेभि,
समुद्वहद्भि स्थविरानगारै ।
पूज्यै सुखीराम-मुनीश्वरैश्च,
क्षेत्र च तद् धन्यमिह प्रतीम ।।

अर्थ उक्त क्षेत्र को हम 'धन्य' समझते हैं, जहा पूज्य मुनिराज श्री सुखीराम जी महाराज तथा अन्य स्थविर मुनिजनो ने 'स्थानपति' (ठाणापति) रहते हुए चिरकाल तक निवास किया।

(११४)

(मन्दाक्रान्ताछन्द)

वर्षावासा अपि ममभवन्नत्र चाष्टादशैषाम्,
आसन्नेभि सह मुनिवरा रामजीलालपूज्या ।
सेवाकार्ये स्थविर-सुगुरून् प्रीणयन्त कदाऽपि,
कार्ये किञ्चित्कथमपि कदालस्य-लेश व्यधुर्न ।।

अर्थ इसी क्षेत्र मे इन पूज्य मुनिराज के अठारह वर्षावास (चातुर्मास) सम्पन्न हुए। इन्ही के साथ पूज्य मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज भी रहे। मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज ने इन स्थविर-वृद्ध सद्गुरु-जनो को अपने सेवा-कार्यो से प्रसन्न करते हुए अपने काम मे कभी भी, किसी तरह का तथा कुछ भी आलस्य नही किया।

(११५)

(उपजातिच्छन्द)

सदा गुरूणा चरणाब्जयोस्ते,
समर्पितान्त करणा अभूवन् ।
श्रीरामजीलाल-मुनिप्रवर्या ,
नैच्छन् कदाचिन्न यश प्रतिष्ठाम् ।।

अर्थ वे मुनिश्री रामजीलाल महाराज सदैव अपने गुरुवर के चरण-कमलो मे अपना अन्त करण समर्पित कर चुके थे, और उन्होने यश व प्रतिष्ठा की कभी इच्छा नही की।

(११६)

(उपजातिच्छन्द)

सुदुष्करोत्साहयुतातिसेवा-
सम्बद्ध-नानाघटनाश्च लोके।
तेषा सुसेवामय-जीवनस्य,
निदर्शनान्यप्रतिमान्यभूवन्।।

अर्थ उत्साहपूर्ण तथा अत्यन्त दुष्कर सेवा-कार्यो से सम्बद्ध अनेक घटनाये ऐसी है जो उनके सेवाभावी जीवन के अद्वितीय उदाहरण बन गई हैं।

(११७)

(इन्द्रवज्राछन्द)

निर्देशन प्राप्य च सद्गुरूणाम्,
श्रीरामजीलालसुसाधुवर्या।
समस्तजैनागमशास्त्रतत्त्वम्,
एकाग्रचित्ता समधीतवन्त।।

अर्थ मुनिवर श्री रामजीलाल जी महाराज ने अपने सद्गुरु के निर्देशन मे एकाग्रचित्त होकर समस्त जैनागमो व शास्त्रो के सार-तत्त्व का अध्ययन कर लिया था।

(११८)

(उपजातिच्छन्द)

सेवातिरिक्ते समये च लब्ध,
जैनागम-स्वादयनेऽनुरक्ता ।
अस्वस्थ आत्मा परिचर्यते स्म,
जिनोक्तिरूपौषधिभिस्तदा तै ।।

अर्थ जब भी इन्द्र सेवा से अतिरिक्त समय प्राप्त होता, तभी व जैनागमो के स्वाध्याय मे अनुरक्त हो जाते थे। स्वाध्याय म वे अपनी अस्वस्थ आत्मा की जिन-वाणी रूप औषधियो स परिचर्या/सवा किया करते थे।

(११९)

(मन्दाक्रान्ताछन्द)

कर्मग्रन्था परमजटिला धीविशेषेण गम्या,
कण्ठस्थास्ते स्थिरसुमनसाऽऽवर्त्यमाना अभूवन् ।
तद्वैदुष्य प्रकटममकृत् तत्त्वचर्चा-प्रसगे,
विद्वद्-वृन्दे परम-महिता साधुवर्या प्रजाता ।।

अर्थ जैन कर्मग्रन्थ अत्यन्त जटिल है और उन्हे विशाष मेधा के द्वारा ही पढा-समझा जा सकता है। वे कर्मग्रन्थ मुनिश्री को कण्ठस्थ थे और वे उनकी स्थिर मन से आवृत्ति भी कर लिया करते थे। तत्त्व-चर्चा मे उनका कई बार वैदुष्य प्रकट हुआ था, इसलिए वे विद्वत्समाज मे अत्यन्त पूजित हो गए थे।

(१२०)

(उपजातिच्छन्द)

प्रान्ते तदानीमिह वावदूका,
अनेकधा धार्मिक-सम्प्रदाया।
सपोषयन्ति स्म यथा कथचिद्,
शास्त्रार्थवादै स्वमतानि चैते।।

अर्थ उन दिनो (हरियाणा) प्रान्त मे अनेक प्रकार के धार्मिक सम्प्रदाय थे, जो अत्यधिक मुखर स्वभाव के थे। वे अपने मतो को शास्त्रार्थ व वाद-विवादो मे पुष्ट किया करते थे।

(१२१)

(वसन्ततिलकाछन्द)

श्रीरामलालमुनिभि सह वाद-गोष्ठ्याम्,
सर्वश्च वादि-निवहोऽपहतप्रभोऽभूत्।
प्रत्यक्षकौतुकमिद च पराजित सन्,
वाद्येव तन्मुनिमतस्य समर्थकोऽभूत्।।

अर्थ मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज के साथ वाद-चर्चा मे सभी वादी जनो की शोभा फीकी पड जाती थी। प्रत्यक्ष मे आश्चर्य की बात तो यह होती थी कि वादी मुनिश्री से पराजित होकर, स्वय ही इन मुनिश्री के मत का समर्थक हो जाता था।

(१२२)

(वसन्ततिलकाछन्द)

वादे न केवलमिमे परमप्रवीणा ,
धर्मादिक-प्रवचनेऽपि विशेषदक्षा ।
प्राग्योजना मनसि नैव विधाय क्वचिद्,
एते निज प्रवचन व्यदधु सदैव ।।

अर्थ ये मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज न केवल वाद चर्चा मे प्रवीण थे, अपितु धर्मोपदेश आदि के व्याख्यान मे विशेष दक्षता इन्हे प्राप्त थी। वे सदैव जब अपना प्रवचन किया करते तो पहले मानसिक रूप से (विषय-वस्तु की) सुयोजना नही बनाते थे।

(१२३)

(वसन्ततिलकाछन्द)

एतन्मुखाद् वचननिर्झरिणी-प्रवाह ,
नैसर्गिक प्रभवति स्म सदा सभासु ।
साधारणा स्युरथवा सुबुधा , अमीषाम्,
सर्वोपरि प्रवचनस्य समप्रभाव ।।

अर्थ इन मुनिश्री के मुख से सदैव सभा-सम्मेलनो मे स्वभावत वचन-सरिता प्रवाहित हुआ करती थी। चाहे साधारण जनता हो या विद्वद्वर्ग, इनके प्रवचन से वे सभी समान रूप से प्रभावित होते थे।

(१२४)

(उपजातिच्छन्द)

सामाजिक स्यादथ धार्मिको वा,
सुतात्त्विको वा विषय सभासु।
समानरूपेण विचक्षणत्वम्,
एषा च दृष्ट हृदयप्रभावि।।

अर्थ चाहे (प्रवचन का) विषय सामाजिक, या धार्मिक व तात्त्विक हो, किन्तु सभा (आदि) मे सभी विषयो पर समानरूप से प्रभावोत्पादक पाण्डित्य उनका दृष्टिगोचर होता था।

(१२५)

(उपजातिच्छन्द)

निसर्गतो गायन-दक्षता ते
स्वरस्य माधुर्यमपि प्रकृष्टम्।
समुद्वहन्ति स्म सुसाधुवर्या,
तस्माच्च लोकप्रियताऽर्जिता तै।।

अर्थ साधुवर श्री रामजीलाल जी महाराज नैसर्गिक गायन-कुशलता तथा उत्कृष्ट स्वर-माधुर्य के धनी थे, इसलिए उन्हे प्रभूत लोकप्रियता भी प्राप्त हुई।

(१२६)

(उपजातिच्छन्द)

तारस्वरोक्त च यदा सभायाम्,
व्याख्यानकार्यं भवति स्म तेषाम् ।
समागतानेकसहस्र — सख्या-
मिता जना स्पष्टतयाऽप्यश्रृण्वन् ।।

अर्थ जब सभा मे उनका ऊचे स्वर से व्याख्यान होता था तो उपस्थित हजारो लोग उसे स्पष्ट सुन लेते थे।

(१२७)

(वसन्ततिलकाछन्द)

साक्षात्सुदुष्कर - तपोमयमूर्तयस्ते,
शास्त्रोक्त-सप्तदश-सयमधारकाश्च ।
अगे परीषहजयित्वमपारधैर्यम्,
दृष्टा परा मनसि निर्भयता च तेषाम् ।।

अर्थ वे मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज दुष्कर तपश्चर्या के साक्षात् मूर्ति थे। वे शास्त्रो मे वर्णित १७ प्रकार के सयम के धारक थे। उनके शरीर मे परीषह-जय की शक्ति थी, और उनके मन मे अपार धैर्य तथा उत्कृष्ट निर्भयता दृष्टिगोचर होती थी।

(१२८)

(वसन्ततिलकच्छन्द)

अव्याहता निजतपोमयसाधनायाम्,
तिर्यङ्मनुष्यसुरलब्ध-परीषहैस्ते ।
सत्यादिकानि हितकारि-महाव्रतानि,
मन्ये स्थितानि सुतनौ प्रतिरोमकूपम् ।।

अर्थ उन्हे तिर्यञ्च, मानव तथा देव–इन तीनो से किये जाने वाले परीषहो से अपनी तपोमय साधना मे कभी-व्याघात नही हो पाया। ऐसा माना जाता है कि उनके शरीर के रोम-रोम मे सत्य आदि आत्म-हितकारी महाव्रतो का निवास हो रहा था।

(१२९)

(उपजातिच्छन्द)

सर्वेन्द्रियाणि स्वत एव तेषाम्,
सुसयमाराधन - तत्पराणि ।
जितेन्द्रियाणा धुरि कीर्तनीया,
जाता समस्तश्रमणेषु मान्या ।।

अर्थ उन मुनिश्री की सभी इन्द्रिया सम्यक् सयम-धर्म की आराधना मे स्वभावत प्रवृत्त रहती थी। (अत) वे समस्त साधुओ मे 'जितेन्द्रियो मे सबसे अग्रणी' रूप मे माने जाने लगे।

(१३०)

(उपजातिच्छन्द)

हित प्रिय सत्यमिमे वदन्त,
भाषासमित्या बहु सावधाना ।
कदापि कस्यापि न पीडकानि,
वचासि तेषा मुखत श्रुतानि ।।

अर्थ ये मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज हितकारी व प्रिय सत्य बोलते और भाषा-समिति के पालन मे अत्यधिक सावधानी बरतते थे। उनके मुख से कभी ऐसे वचन नही सुनाई दिये जो किसी को भी पीडा देने वाले हो।

(१३१)

(उपजातिच्छन्द)

जिह्वेन्द्रिय तैर्विजित सुसम्यक्,
विशेषरूपेण सुसाधुवर्यै ।
बाह्येष्वनेकानशनादिकेषु,
तप सु तेषामधिका प्रवृत्ति ।।

अर्थ उन मुनिश्रेष्ठ ने उत्कृष्ट रूप से जिह्वा-इन्द्रिय पर विजय प्राप्त कर रखी थी। 'अनशन' आदि अनेकविध बाह्य तपो मे उनकी प्रवृत्ति अधिक रहा करती थी।

(१३२)

(वसन्ततिलकाछन्द)

ऊनोदरत्वमपि तै क्रियते स्म पूज्यै ,
प्रायोऽभवश्च सुरस-त्यजनेच्छुकास्ते ।
कृत्वाऽप्यनेक दिवसान् रसना-जयार्थम्,
आचाम्ल-बाह्यतप उत्तमकीर्तिमापु ।।

अर्थ पूज्यवर मुनि श्री रामजीलाल जी महाराज को रस-सेवन के त्याग की इच्छा प्राय रहती थी और वे ऊनोदरी (अवमोदर्य) व्रत किया करते थे। जिह्वा इन्द्रिय पर विजय प्राप्त करने हेतु उन्होने अनेक दिनो तक 'आयम्बिल' तप किये थे और श्रेष्ठ यश प्राप्त किया था।

(१३३)

(आर्याछन्द)

एकाधिकपञ्चाशद्-दिनानि यावत्सुदीर्घमाचाम्लम् ।
मुनिभिरनुष्ठितमासीत् सुतप कर्म-प्रहाणार्थम् ।।

अर्थ . एक बार तो पूज्य मुनि श्री ने कर्म-निर्जरा हेतु ५१ दिनो तक लम्बा 'आयम्बिल' तप किया था।

(१३४)

(उपजातिच्छन्द)

ग्रीष्मर्तुकाले दिनमध्यभागे,
प्रचण्डसूर्यातप-सस्थिताश्च ।
'आतापना-योग'-सुनाम-'काय-
क्लेश' तपो बाह्यमनुष्ठित तै ।।

अर्थ वे मुनि श्री ग्रीष्म ऋतु मे दोपहर के समय प्रचण्ड सूर्य की धूप मे बैठकर 'आतापना' नामक बाह्य कायक्लेश तप भी किया करते थे।

(१३५)

(इन्द्रवज्राछन्द)

सूर्याशुतीव्रोष्णतया प्रजात,
श्यामाभकायो मुनिपुगवानाम् ।
दुर्धर्षतेजो वहत स्म तेषाम्,
श्यामोऽपि कायोऽक्षियुग च नित्यम् ।।

अर्थ . सूर्य की किरणो की तेज गरमी से मुनिश्रेष्ठ श्री रामजीलाल जी महाराज के शरीर की आभा श्याम हो गई थी किन्तु उनके श्याम शरीर तथा दोनो आखो मे दुर्धर्ष तेज सदैव विद्यमान रहता था।

(१३६)

(उपजातिच्छन्द)

सालम्बनध्यानविधि-प्रसगे,
मन्त्रादिकानामुपयोगिताऽस्ति।
अतो हि साधुप्रवरैर्व्यधायि,
समादरो मन्त्र-जपेऽपि भूयान्।।

अर्थ 'सालम्बन ध्यान' की क्रिया के सन्दर्भ मे मन्त्रादि की उपयोगिता (मानी जाती) है, इसलिए साधुप्रवर मन्त्र-जप मे अधिक आदर रखते थे।

(१३७)

(इन्द्रवज्राछन्द)

रागादिदुस्त्याज्य-कषायवृक्षान्,
चरित्रखड्गेन समच्छिदस्ते।
यस्मात्कषायस्य जय विनाऽस्ति,
सम्यक्त्वचारित्र-निरर्थकत्वम्।।

अर्थ वे चारित्र रूपी खड्ग से दुष्करता से छूटने वाले रागादि कषायरूपी वृक्षो को उच्छिन्न किया करते थे, क्योकि कषायो पर विजय/निग्रह किये बिना सम्यक्त्व एव चारित्र की सार्थकता नही होती।

(१३८)

(उपजातिच्छन्द)

तेषा मुनीना समताश्रितानाम्,
कदापि कचित्प्रति नोदभूवन् ।
क्रोधश्च रोषश्च तथाऽप्रसाद ,
दुर्मानभावश्च मनस्यसूया ।।

अर्थ मुनि श्री रामजीलाल जी महाराज समता भाव मे स्थित रहा करते थे, इसलिए उनके मन मे कभी और किसी के प्रति भी क्रोध, रोष, अप्रसन्नता, दुरभिमान तथा असूया (गुणो मे दोष-दृष्टि) आदि भाव उत्पन्न नही होते थे।

(१३९)

(इन्द्रवज्राछन्द)

प्रतिष्ठितान्यादर-सूचकानि,
सम्बोधन-श्रेष्ठपदानि नैच्छन् ।
सर्वैषणा दूरमपास्य नित्यम्,
निर्लोभता ते दधते स्म चित्ते ।।

अर्थ उन्होने न तो प्रतिष्ठित श्रेष्ठ पदो की इच्छा की, और न ही आदरवाचक सम्बोधन (उपाधियो) की। सभी प्रकार की एषणाओ से दूर रहते हुए, वे हमेशा मन में निर्लोभ वृत्ति धारण किये रहते थे।

(१४०)

(उपजातिच्छन्द)

•

ते मार्दव चार्जवमुद्वहन्त,
मुनीन् कनिष्ठानपि मानयन्त ।
सदा परा निश्छलता दधन्त,
आदर्शरूपा मुनितामभाक्षु ।।

अर्थ मुनि श्री मार्दव व आर्जव धर्म धारण किये रहते थे। अपने मे छोटे साधुओ का भी वे सम्मान करते थे। मन मे उत्कृष्ट निश्छलता रखते हुए उनका 'आदर्श मुनि' का स्वरूप रहता था।

(१४१)

(उपजातिच्छन्द)

आभ्यन्तरैर्नैकविधैश्च बाह्यै,
परिग्रहैस्ते रहिता सदैव।
शिष्यादिकानामपि सग्रहे न,
दृष्टो विशेषादरभाव एषाम् ।।

अर्थ वे सदा ही बाह्य व आभ्यन्तर अनेकविध परिग्रहों से रहित थे। उनका शिष्यादि-निर्माण रूप सग्रह मे भी कोई विशेष आदर नही रहता था।

(१४२)

(उपजातिच्छन्द)

ते वस्त्रपात्रादिषु साधुवर्या ,
आडम्बरालकृतिमण्डनानि ।
राग च निन्दाविकथादिकार्ये,
क्दापि नैच्छन् परिशुद्धभावा ।।

अर्थ वे मुनिवर वस्त्र, पात्र आदि मे साज-सजावट व चमक-दमक नही चाहते थे, साथ ही वे अपने भावो की शुद्धता बनाये रखते थे और निन्दा, विकथा आदि कामो मे कभी अनुरक्त नही होते थे।

(१४३)

(उपजातिच्छन्द)

शुद्धात्मरूप समवाप्तुमेते,
सुनिर्जने स्थानवरे रजन्याम् ।
ध्यानक्रियायामभवन्प्रवृत्ता ,
सुदीर्घकाल बहुशो मुनीन्द्रा ।।

अर्थ शुद्धात्मस्वरूपता प्राप्ति की इच्छा से वे मुनिवर प्राय रात्रि मे निर्जन स्थान पर बहुत देर तक ध्यान-क्रिया मे सलग्न रहा करते थे।

(१४४)

(उपजातिच्छन्द)

ध्याने च तेषा न हि काऽपि बाधा,
भवेदत स्थानक एत्य लोक ।
प्रायेण रात्रौ वसति स्म नैव,
यद्वा सुदूरे कुरुते स्म वासम् ।।

अर्थ उन्हे ध्यान करने मे किसी प्रकार की बाधा उपस्थित न हो, इसलिए लोग स्थानक मे आते तो प्राय रात मे वहा ठहरते नही थे, या ठहरते भी तो उनसे कही दूर स्थान पर ठहरते थे।

(१४५)

(उपजातिच्छन्द)

या साधना मोक्षपदेन, यद्वा,
परात्मना कारयतीह योगम् ।
सा जायते 'योग'-पदेन वाच्या,
नून च ते योगिन एवमासन् ।।

अर्थ इस ससार मे जो साधना 'मोक्ष' से या परमात्म-अवस्था से योग कराती है, वह 'योग' नाम से अभिहित होती है। इस दृष्टि से वे निश्चय ही 'योगी' थे।

(१४६)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

अब्दे खग्रहरन्ध्रभू परिमिते श्रीविक्रमीये शुभे,
माधूनामजमेर-नामकपुरे सम्मेलन चाभवत् ।
एतैस्तत्र सुयोगिभिर्मुनिवरैस्तत्प्रातिनिध्य कृतम्,
मायाराममुनीश्वरानुगमुनि-व्रातेन सप्रेषितै ।।

अर्थ शुभ विक्रम सवत् १९९० मे अजमेर शहर मे साधुओ का एक सम्मेलन आयोजित हुआ था। मुनिवरेन्द्र पूज्य श्री मायाराम जी महाराज के अनुयायी मुनियो के समूह की ओर से इन्हे वहा भेजा गया था और इन योगी मुनिवर ने वहा इनका प्रतिनिधित्व किया था।

(१४७)

(वसन्ततिलकाछन्द)

सम्मेलने च बहवो मुनिसम्प्रदाया,
उत्साहपूर्वममिलन् बहुदिग्भ्य एत्य ।
पूज्यास्तपस्विमहिता मुनिराज आत्मा-
रामाभिधा अपि च तत्र तदा समायान् ।।

अर्थ सम्मेलन मे अनेक दिशाओ से आकर अनेक मुनि-सम्प्रदायो का परस्पर उत्साह-पूर्वक मिलना हुआ था। वहा उक्त सम्मेलन मे पूज्य तपस्वि-वन्दित मुनिराज श्री आत्माराम जी महाराज भी पधारे थे।

(१४८)

(वसन्ततिलकाछन्द)

सम्मेलने जिगमिषौ निवहे मुनीनाम्
सत्सगम पथि शुभोऽजनि योगिराजो ।
श्रीरामलालमुनिरेक इहान्य आत्मा-
रामो मुनिश्च खलु योगिवरौ प्रसिद्धौ ।।

अर्थ सम्मेलन मे जाने के इच्छुक मुनियो के समूह मे दो योगिराजो का मार्ग मे शुभ समागम हुआ। उनमें से एक तो मुनिवर श्री रामजीलाल जी महाराज थे और दूसरे पूज्य श्री आत्माराम जी महाराज थे, और ये दोनो श्रेष्ठ योगी के रूप मे ख्यातिप्राप्त थे।

(१४९)

(वसन्ततिलकाछन्द)

अन्योन्य-सद्गुणनिधीक्षण-लब्धमोदौ,
मोदाय सज्जनगणस्य तदा प्रजातौ।
एतावुभावपि समानरुची सहैव,
निध्यायत स्म विजने पृथगेव सर्वै ।।

अर्थ ये दोनो एक-दूसरे के सद्गुणो को देखकर प्रमुदित हुए जिन्हे देखकर सज्जनो को प्रमोद हुआ। इन दोनो की रुचि समान थी, इसलिए वे दोनो साथ ही रहते और सब साधुओ से अलग रहकर निर्जन स्थान मे ध्यान किया करते थे।

(१५०)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

आत्मारामुनीश्वरा मुनिवरश्रीरामजीलाल-धीम्
योगध्यानसमाधिनित्यनिरता दृष्ट्वाऽभवन् विस्मिता ।
सुस्थैर्यं परमाद्भुत च मनस सद्ध्यानमार्गे शुभे,
एतत्साधुवरस्य दृश्यत इति स्वान्तेऽन्वभूवश्च ते ।।

अर्थ पूज्यवर श्री आत्माराम जी महाराज ने जब मुनिवर श्री रामजीलाल जी महाराज की योग, ध्यान, समाधि मे हमेशा रहने वाली बुद्धि देखी तो वे आश्चर्य-चकित रह गए। उन्होने उस समय मन मे अनुभव किया कि प्रशस्त ध्यान-साधना के शुभमार्ग मे इन साधुवर की अद्भुत मानसिक स्थिरता दृष्टिगोचर होती है।

(१५१)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

हार्दस्तद्विषये निज प्रकटित सम्मेलने तत्र तै,
आत्माराम-मुनीश्वरैरनुभव सघे मुनीना तदा।
"शास्त्रज्ञा उपदेशकाश्च बहव सेवापरा साधव
किन्त्वेकोऽत्र विराजितोऽस्त्यनुपमो ध्यानी सुयोगी वर"।

अर्थ तब उन पूज्यवर्य मुनीश्वर श्री आत्माराम जी महाराज ने उक्त मुनि-सघ/सम्मेलन मे इन मुनिवर के विषय मे अपना निजी हार्दिक अनुभव इस प्रकार प्रकट किया था—"शास्त्रज्ञानी, उपदेशक, तथा सेवाभावी साधु तो अनेक हैं, किन्तु यहा अद्वितीय ध्यानी व श्रेष्ठ योगी के रूप मे एकमात्र मुनि विराजमान हैं।"

(१५२)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामजीलालमुनि स नूनम्,
अस्मासु सर्वेष्विह योगिराज ।
मुनीश्वराणा च निशम्य हार्दम्,
प्रोक्त, प्रजाता मुनय प्रसन्ना ।।

अर्थ "हम सब के मध्य मे यहा वे योगिराज निश्चित रूप से मुनि श्री रामजीलाल जी हैं।" मुनीश्वर श्री आत्माराम जी महाराज के हार्दिक भावो को सुनकर सभी मुनि प्रसन्न हुए।

(१५३)

(उपजातिच्छन्द)

तत प्रभृत्यत्र च साधु-सघे,
श्रीरामजीलाल- मुनिप्रवर्या ।
ते योगिराजेति - विशेषणेन,
सम्बोधिता सादरमानपूर्वम् ।।

अर्थ उसी समय से यहा साधु-सघ मे मुनिप्रवर श्री रामजीलाल जी महाराज 'योगिराज' इस विशेषण से आदर व सम्मान के साथ सम्बोधित किये जाते रहे।

(१५४)

(उपजातिच्छन्द)

एतेऽपि सम्मानित-योगिराजा ,
ध्यानक्रियाया सततप्रमत्ता ।
आजीवन प्रत्यहमन्वतिष्ठन्,
स्वसाधनामात्महिते समर्थाम् ।।

अर्थ इन सम्माननीय 'योगिराज' श्री रामजीलाल जी महाराज ने भी ध्यान-साधना मे निरन्तर अप्रमादी रहते हुए अपनी आत्मकल्याणकारी साधना को आजीवन जारी रखा ।

(१५५)

(उपजातिच्छन्द)

योगात्मिकायामिह साधनायाम्,
सन्त्युच्चसोपानमधिष्ठिता ये ।
स्वत समायान्ति सुसिद्धयस्ता,
सुयोगिनामासु विरक्तिरेव ।।

अर्थ उक्त 'योग' साधना मे जो साधक उच्च श्रेणी पर पहुच जाते हैं, उन्हे अनेक सिद्धिया स्वत ही प्राप्त हो जाती हैं, किन्तु अच्छे योगी लोगों को इन सिद्धियो मे विरक्ति ही रहा करती है ।

(१५६)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामजीलालसुयोगिराजा,
स्वसाधनाया क्रमशोऽग्रगण्या ।
स्वत प्रजाता बहुसिद्धिभाज,
सिद्धिप्रयोगे तु न तेऽनुरक्ता ।।

अर्थ . मुनिवर योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज अपनी साधना मे क्रमश अग्रणी होते हुए स्वत अनेक सिद्धियो के धारक बन गए थे, किन्तु उनकी सिद्धियों के प्रयोग/प्रदर्शन मे अनुरक्ति नही थी।

(१५७)

(उपजातिच्छन्द)

सिद्धिप्रयोगे विरतात्मना य,
ससर्गमायाद् यदि कोऽपि तेषाम् ।
सिद्धिप्रभाव निजजीवने स,
समन्वभूद् विस्मयकारिण च ।।

अर्थ यद्यपि वे सिद्धियो के प्रयोग/प्रदर्शन में विरत रहते थे, फिर भी यदि कोई व्यक्ति इनके ससर्ग में आता तो उसे अपने जीवन मे उनकी सिद्धियो का विस्मयकारी प्रभाव अनुभव मे आ जाता था।

(१५८)

(उपजातिच्छन्द)

तेषा कृपादृष्टिमवाप्य मर्त्य ,
समृद्धियुक्तश्च सुखी प्रजात ।
उपेक्षित साधुवरैरमीभि ,
स्वत समृद्धया स उपेक्षितोऽभूत् ।।

अर्थ . उनकी कृपा-दृष्टि जिसे प्राप्त हुई वह व्यक्ति समृद्ध व सुखी हो गया, किन्तु इन मुनिवर का जिस पर उपेक्षा भाव हुआ, उसे स्वत ही समृद्धि ने उपेक्षित कर दिया ।

(१५९)

(इन्द्रवज्राछन्द)

एतन्मुखान्मगलमन्त्रपाठम्,
श्रुत्वाऽभवन् नीरुज आशु केचित् ।
केचित्तु सत्यक्तसुजीविताशा ,
स्वास्थ्य लभन्ते स्म मनोऽनुकूलम् ।।

अर्थ इनके मुख से मागलिक पाठ सुनकर कितने ही लोग यथाशीघ्र निरोगी हो जाते थे। कुछ तो, जिन्होने अपने जीने की भी आशा छोड दी थी, मनोवाछित स्वास्थ्य प्राप्त करते थे।

(१६०)

(इन्द्रवज्राछन्द)

श्रीरामजीलाल - सुयोगिराजाम्,
पादाब्ज-सस्पृष्ट-रजोऽपि भक्तै ।
रोगादिशान्त्यै शुभकार्यसिद्ध्यै,
नेनीयते स्म स्वगृहेषु भक्त्या ।।

अर्थ योगिराज पूज्य श्री रामजीलाल जी महाराज के चरण-कमलो से स्पृष्ट धूल को भी भक्त लोग भक्तिपूर्वक अपने-अपने घरो मे ले जाया करते थे ताकि रोगादि की शान्ति हो तथा शुभ कार्यों मे सफलता प्राप्त हो।

(१६१)

(उपजातिच्छन्द)

यत्किञ्चिदेषा मुखपकजाच्च,
निसर्गतो नि सरति स्म वाक्यम् ।
तस्यानुरूप घटते स्म, यस्माद्,
अमोघवाच खलु योगिराजा ।।

अर्थ . इनके मुख-कमल से जो कुछ भी वचन स्वभावत. निकल जाता था, उसी के अनुरूप घटना घटती थी, क्योकि योगिराज की वाणी निश्चय ही अमोघ (अनिष्फल) होती है।

(१६२)

(उपजातिच्छन्द)

सुसिद्धवाचो मुनयो 'भविष्य-
द्रष्टार' एतत्प्रथित जनेषु ।
अतो मुनीना वचन मनुष्या ,
आकर्णयन्ति स्म च सावधाना ।।

अर्थ लोगो मे यह प्रसिद्ध हो गई थी कि ये मुनिवर वचन-सिद्धि से युक्त तथा भविष्यद्रष्टा हैं, इसलिए इनके वचनो को लोग सावधान होकर सुना करते थे ।

(१६३)

(शार्दूलविक्रीडितछन्द)

आयान्ति स्म च राजनीतिकुशला नेतार उद्योगिन ,
समान्या जननायका अपि जनास्तद्योगिराजान्तिके ।
वित्तावाप्ति-जयादि-भाविघटना-ज्ञानोत्सुका प्रायश ,
यद्वा कार्यसुसिद्धि-हेतुक-शुभाशीर्वादमाप्तु तदा ।।

अर्थ उन श्री योगिराज के पास तब अनेक राजनीति-कुशल नेता, उद्योगपति तथा समानित प्रमुख जननेता भी आया करते थे। विजय व भविष्य को जानने के उत्सुक जन किसी कार्य की सिद्धि के लिए उनका शुभाशीर्वाद पाना चाहते थे ।

(१६४)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

एव भक्तगणा सुविस्मयकरी तद्-वाक्यसिद्धि प्रति,
लुब्धास्तन्मुनिपादपद्मयुगल भक्त्या तदोपासत।
प्रायो मौनमुपाश्रयन्मुनिवरा यद्भावि तद्बोधने,
यत्किंचिन्मुनिभिस्तथापि गदित तत्सत्यमेवाभवत्।।

अर्थ . इस प्रकार, उन योगिराज की आश्चर्यकारी वाणी-सिद्धि के प्रति आकृष्ट होकर भक्त लोग उनके चरण-कमलो की भक्तिपूर्वक उपासना किया करते थे। किन्तु भविष्य को बताने मे मुनिवर प्राय मौन का आलम्बन ले लेते, फिर भी (कभी-कभी) मुनि के मुख से जो कुछ कहा जाता था, वह सत्य ही घटित हो जाता था।

(१६५)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

वेदर्तुग्रहभूमिते शुभतमे ख्रिश्तीयसवत्सरे,
जीन्देतिप्रथिते प्रशस्तनगरे हर्याणके सस्थिते।
तेभ्योऽदायि च सघनायक-पद सर्वानुमत्याऽऽदृतम्,
मायाराममुनीश्वरानुगमुनिव्रातस्य काले शुभे।।

अर्थ हरियाणा की पुण्यनगरी 'जींद' मे ई १९६४ मे (१४ फरवरी) को, मुनिश्री मायाराम जी महाराज के अनुयायी मुनियो के सघ की प्रमुखता का 'सघनायक' पद सर्वसम्मति से उन्हे दिया गया।

(१६६)

(वसन्ततिलकाछन्द)

तेषा सदा कुशलनायकतामवाप्य,
सघश्चतुर्विध उपार्जितवान् प्रतिष्ठम् ।
सौहार्द-साम्य-सहयोग-सुभावनाभि,
सुश्रावका अपि युता सुखिन समृद्धा ।।

अर्थ उनकी कुशल सघ-नायकता मे चतुर्विध सघ निरन्तर प्रतिष्ठा अर्जित करता रहा। श्रावक लोगो मे सौहार्द, साम्यभाव व सहयोग के सद्भाव के कारण सुख-समृद्धि आती गई।

(१६७)

(वसन्ततिलकाछन्द)

पूज्याश्च सद्गुरुवरा सतत स्वभक्तान्,
सद्बोधनैर्हितकरैरुपकुर्वते स्म ।
तेषामिमाश्च महनीय-परोपदेशान्,
अद्यापि धार्मिकजना न हि विस्मरन्ति ।।

अर्थ पूज्य सद्गुरु-श्रेष्ठ श्री रामजीलाल जी महाराज अपने भक्तो को हितकारी सदुपदेशो से सदैव उपकृत करते रहते थे। उनके इन (निम्नलिखित) आदरणीय उपदेशो को आज भी धार्मिक जनता भूली नही है –

(स्रग्धराछन्द) (१६८)

संसारेऽनेकधर्मास्तदनु च विविधा धार्मिकाः सम्प्रदायाः,
तानाश्रित्येह लोके प्रभवति महती भिन्नता देशनायाम् ।
किन्त्वेको धर्ममार्गो, भवति च सहजं यत्र सर्वैकमत्यम्,
यद्धर्मः प्राणिसेवा, सततमुपकृतिर्दीनदुःखार्दितानाम् ।।

अर्थ : ससार में अनेक धर्म हैं, उनके अनुगामी धार्मिक सम्प्रदायो की सख्या भी अनेक है। उन भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों से सम्बन्धित धर्मोपदेशों मे भी अधिक भिन्नता पैदा होती गई है। किन्तु एक ऐसा धर्म-मार्ग है जहा सभी (धर्म-सम्प्रदायो) का स्वाभाविक रूप से ऐकमत्य (सर्वसम्मति) पाया जाता है, वह यह है कि प्राणियो की सेवा एव दीन-दु खियो का उपकार करना 'धर्म' है।

(१६९)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

सौहार्द सहयोगिता च परमा, सत्स्नेहभावस्तथा,
विश्वासश्च परस्पर भवति चेच्छ्रेष्ठ समाजस्तदा ।
यत्रैतत्सकल जनेषु न मन सयोजक दृश्यते,
सोऽवश्य तु समाजता वहति नो, नून श्मशान परम् ।।

अर्थ श्रेष्ठ समाज तभी कहलाता है जब वहा परस्पर सौहार्द, अत्यधिक सहयोग-भावना, उत्तम स्नेह तथा विश्वास विद्यमान हो। किन्तु जहा लोगो मे वह सब नही होता जो परस्पर मन को जोड़ता हो, तो वह 'समाज' तो अवश्य नही है। हा, निश्चित रूप से वह बडा 'श्मशान' ही है।

(१७०)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

स्वार्थान् साधितुमत्र नीतिनिपुणा अन्यानपि प्राणित
व्यक्त कृत्रिम-सौमनस्यभरिता स्वीयान् सदा मन्वते।
चित्ते स्वर्ग्यसुख वहध्वमिह रे नैसर्गिक-स्नेहत,
दीनान् दु खिजनान् स्वत कुरुत सत्स्नेहामृताप्लावितान् ।।

अर्थ अपने स्वार्थों की सिद्धि हेतु इस ससार मे नीतिकुशल लोग सदा दूसरे लोगो को प्रकट रूप मे बनावटी स्नेह व सौमनस्य के साथ 'अपना' मानते हैं। किन्तु दीन व दु खी लोगो को स्वाभाविक स्नेहपूर्वक स्नेहामृत से सराबोर करो, तो इसी लोक मे मानसिक स्वर्गीय सुख की अनुभूति स्वत प्राप्त होगी।

(१७१)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

एतज्जन्मनि सचित भवति यद् वित्तादिक भौतिकम्,
अत्रैव क्रमशो विनश्यति न तद् यात्यन्यजन्मन्यपि।
दानाद्यर्जितपुण्यमस्ति सुखद जन्मान्तरस्थायि सत्,
त्यागो दानमुपार्जन खलु भवेद् हानिस्तु तत्सग्रह ।।

अर्थ इस जन्म मे जो भी धन आदि भौतिक संचित होता है, वह यही क्रमशः नष्ट हो जाता है और अगले/अन्य जन्म मे साथ नही जाता। किन्तु दान आदि (त्याग-कार्यों) से जो पुण्य अर्जित किया जाता है, वह जन्म-जन्मान्तर तक स्थायी रहता है। इसलिए त्याग या दान ही उपार्जन/सचय है, और उसका सग्रह/परिग्रह ही 'खोना' है।

(१७२)

(उपजातिच्छन्द)

दृष्टिक्षम नेत्रयुग दधान,
दयाविहीनोऽन्धसमान एव ।
यस्यास्ति दीनार्तिहराऽनुकम्पा-
दृष्टि, *प्रजात खलु नेत्रवान् स ।।*

अर्थ देखने मे पूर्ण समर्थ दो नेत्रो वाला व्यक्ति भी यदि दया भाव से रहित है तो वह 'अन्धे' जैसा ही है। किन्तु जिसमे दीन-दुखियो की पीडा हरने की अनुकम्पा विराजमान है, वही वास्तव मे 'नेत्रवाला' है।

(१७३)

(आर्याछन्द)

पुण्योत्तरप्रदेशे, धर्मक्षेत्र विभात्यमीनगरम् ।
तस्मिन् वर्षावास , जातोऽन्त्यो योगिराजानाम् ।।

अर्थ . पुण्यशाली उत्तरप्रदेश राज्य मे 'अमीनगर' (मेरठ) नामक धार्मिक क्षेत्र सुशोभित है। वहा पूज्य श्री योगिराज रामजीलाल जी महाराज का अन्तिम वर्षावास (चातुर्मास) सम्पन्न हुआ था।

(१७४)

(इन्द्रवज्राछन्द)

अस्वस्थता तीव्रतमा च देहम्,
तत्राक्रमीत् पूज्यमुनीश्वराणाम्।
स्वस्था कदाचित् पुनरेव रुग्णा,
इत्यादिको दृष्टिगत क्रमोऽभूत्।।

अर्थ वहा पूज्य मुनिवर के शरीर पर अस्वस्थता के कई बार आक्रमण हुए। कभी वे स्वस्थ हो जाते, फिर पुन रुग्ण। यही क्रम प्राय चलता रहा।

(१७५)

(उपजातिच्छन्द)

एतेन सर्वे मुनिराजभक्ता,
प्रायोऽन्वभूवन् बहुदु खमन्त।
पूज्यास्तु ते पर्यसहन्त धीरा,
निराकुला रोगपरीषहाश्च।।

अर्थ उक्त अस्वस्थता के कारण मुनिराज के सभी भक्तो को अत्यधिक आन्तरिक दु ख हो रहा था, किन्तु वे पूज्य मुनिराज रोग-परीषहो को धीर व निराकुल होकर सहन कर रहे थे।

(१७६)

(उपजातिच्छन्द)

सत्य यथा जीवनमस्ति लोके,
तथैव मृत्यु सहजाऽनिवार्या।
बोधोऽयमास्ते परम हि सत्यम्,
विशिष्टयोगी खलु सत्यदर्शी ।।

अर्थ जैसे ससार मे जीवन सत्य है, वैसे ही मृत्यु भी सहज और अनिवार्य है। इस तथ्य का बोध ही परम सत्य है और विशिष्ट योगी इस (परम) सत्य का निश्चय ही द्रष्टा हुआ करता है।

(१७७)

(उपजातिच्छन्द)

ते सत्यदर्शिप्रमुखा मुनीशा,
अध्यासिषुर्धीरतया तदानीम्।
अनश्वर पूर्णमनन्तमेकम्,
शुद्ध चिदानन्दमयात्मतत्त्वम् ।।

अर्थ सत्यद्रष्टा (योगियो) मे अग्रणी वे पूज्य मुनिवर तो उस समय अविनाशी, पूर्ण, अनन्त, शुद्ध चिदानन्दमय एक आत्मतत्त्व का धीरता के साथ ध्यान करते थे।

(१७८)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामजीलालमुनीन्द्रवर्या ,
समागतान् भक्तजनान् तदानीम् ।
विज्ञाय नून निजजीवनान्तम्,
वरोपदेशानुपदिष्टवन्त ।।

अर्थ मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज ने उस समय अवश्यरूप से अपने जीवन का अन्त निकट समझ लिया था और (इसलिए) उन्होने आये हुए (उपस्थित) भक्त-जनो को श्रेष्ठ उपदेश प्रदान किया था।

(१७९)

(उपजातिच्छन्द)

चतुर्विधे सघवरे च नूनम्,
सौहार्दवृद्ध्यै विहितप्रयत्नै ।
सस्थापनीय हृदि सौमनस्यम्,
परस्पर श्रावकभक्तलोकै ।।

अर्थ श्रावक भक्त लोगो को चाहिए कि वे अवश्य रूप से चतुर्विध सघ मे सौहार्द की वृद्धि हेतु प्रयत्नशील हो और परस्पर सौमनस्य की स्थापना करे।

(१८०)

(इन्द्रवज्राछन्द)

सद्भावना निश्छलता च सर्वै,
रक्ष्या सदा लौकिकजीवनेषु ।
कार्या सदा प्राणिदया, विशुद्धा
न्यायोचिताऽनिन्दितजीविका च ।।

अर्थ अपने व्यावहारिक (लौकिक) जीवन मे सभी को सद्भावना तथा निश्छलता रखनी चाहिए, साथ ही प्राणियो पर दया एव विशुद्ध न्यायोचित अनिन्दित जीविका का आश्रयण करना चाहिए ।

(१८१)

(उपजातिच्छन्द)

जिनोक्तधर्मे च जिनेन्द्रवाण्याम्,
श्रद्धानमाश्रित्य सुवर्तितव्यम् ।
सत्यज्य पापव्यसनानुरक्तिम्,
अणुव्रताना चरणेऽनुरक्तै ।।

अर्थ . आप लोगो को चाहिए कि पापो तथा व्यसनो मे अपनी अनुरक्ति छोडें, अणुव्रतो के आचरण मे अनुराग रखे तथा जिन-प्रतिपादित धर्म तथा जिनवाणी मे श्रद्धाभाव रखते हुए परस्पर समीचीन व्यवहार करे ।

(१८२)

(उपजातिच्छन्द)

समस्तसावद्यनिवृत्तिरूपम्,
धर्मं तप सयमशौचपूर्णम् ।
अनुष्ठितु चापि भवद्भिरत्र,
कार्यो यथाशक्ति शुभ प्रयत्न ।।

अर्थ समस्त सावद्य (पापयुक्त) कार्यों से निवृत्ति रूप तप, सयम, निर्लोभवृत्ति से परिपूर्ण धर्म के अनुष्ठान हेतु भी आप लोगो को यथाशक्ति शुभ प्रयत्न करना चाहिए।

(१८३)

(उपजातिच्छन्द)

उद्घाटित पुस्तकमन्यलोक,
स्पष्ट यथाऽध्येतुमिह क्षमोऽस्ति ।
तथैव कार्यं निजजीवन च,
सुनिर्मल निश्छलमात्मशुद्धम् ।।

अर्थ जैसे खुली पुस्तक को दूसरे लोग स्पष्ट रूप से पढ पाने मे सक्षम होते हैं उसी प्रकार अपने जीवन को (खुली किताब की तरह) निर्मल, निश्छल व मानसिक शुद्धता से युक्त बनाये रखना चाहिए।

(१८४)

(उपजातिच्छन्द)

विनश्वर देहममी स्वकीयम्,
जिहासव पूज्यवरास्तदानीम्।
सम्पादितावश्यकसत्क्रिय सन्,
सल्लेखना धीरतयाऽऽश्रयन्त।।

अर्थ पूज्यवर योगिराज श्रीरामजीलाल जी महाराज के मन मे अपने विनाशशील देह को छोडने के भाव उत्पन्न हो गए, और उन्होने सभी आवश्यक प्रशस्त क्रियाओ को सम्पन्न कर धीरतापूर्वक 'सल्लेखना' ग्रहण कर ली।

(१८५)

(इन्द्रवज्राछन्द)

अब्ध्यक्षिशून्याक्षिमिते प्रवृत्ते,
श्रीविक्रमाब्दे खलु शारदीये।
मास्याश्विने चासितपचमेऽह्नि,
पूज्या मुनीशास्त्रिदिव प्रयाता।।

अर्थ विक्रम स० २०२४ की शरदृतु तथा आश्विन मास की पचमी तिथि के दिन, पूज्य मुनिवर श्री रामजीलाल जी महाराज स्वर्गस्थ हो गए।

(१८६)

(शार्दूलविक्रीडितच्छन्द)

जीवो जन्तुरिति स्मृतो हि विविधा योनी स सक्रामति,
पापौघैरवरोहतीह, सुकृतादुच्चै समारोहति।
प्रत्येक भव-जीवन भवति तत्सोपानमामुक्ति तत्
सोपानद्वययोजक हि मरण नान्यद् बुधै सम्मतम्।।

अर्थ 'जीव' की एक सज्ञा 'जतु' है, क्योकि वह विविध योनियो मे सचरण करता रहता है। यदि वह पाप-समूह करता है तो नीचे उतरता है, और पुण्य करता है तो ऊपर चढ़ता है। इस दृष्टि से, जब तक मुक्ति-प्राप्ति न हो, प्राणी का प्रत्येक जीवन एक सोपान (सीढी) है। 'मृत्यु' और कुछ नहीं, दो सोपानो को जोडने वाली एक कडी है—ऐसा विद्वानो का विचार है।

(१८७)

(उपजातिच्छन्द)

मुनीश्वराणामपि जन्मनोऽस्य,
जातोऽत्र यो भौतिकदेहनाश ।
स भाविसोपानमनश्वराणाम्,
दिव्यात्मना सुप्रकटीचकार।।

अर्थ (अत) पूज्य मुनिराज के इस जन्म से सम्बन्धित भौतिक देह का विनाश (मृत्यु) जो हुआ, वह उन अविनाशी दिव्यात्मा के भावी सोपान की ही सूचना दे रहा था।

(१८८)

(उपजातिच्छन्द)

अध्यात्मयोगाश्रयणेन नूनम्,
क्रमेण सोपानकमारुहन्त ।
न सशयोऽस्मिन् यदमी मुनीन्द्रा ,
प्राप्स्यन्ति लक्ष्य भवबन्ध-मोक्षम् ।।

अर्थ इसमे सन्देह नही कि ये मुनिवर योगिराज अध्यात्म योग का आश्रयण लेने के कारण क्रम से ऊचे-ऊचे सोपानो पर चढते हुए, निश्चय ही 'मोक्ष' को प्राप्त करेगे ।

(१८९)

(उपजातिच्छन्द)

देहावसान विनिशम्य तेषाम्,
पचाप-हर्याणक-देहलीत ।
नेदिष्ठसुक्षेत्रवरात्तदानीम्,
समागतोऽपार-जनोदधिश्च ।।

अर्थ पूज्य मुनिराज के देहावसान को सुनकर उस समय पंजाब, हरियाणा, दिल्ली आदि समीपवर्ती क्षेत्रों से अपार जन-समुद्र उपस्थित हो गया था ।

(१९०)

(उपजातिच्छन्द)

भक्तैरसख्यैरिह साश्रुनेत्रै ,
श्रद्धाप्रसूनाञ्जलय प्रदत्ता ।
तपोमयी मूर्तिरपास्य भक्तान्,
सप्रस्थिताऽग्रेऽद्य परत्र गन्तुम् ।।

अर्थ अगणित भक्तो ने आसू भरे नेत्रो से उन्हे श्रद्धाञ्जलि प्रदान की। आज एक तपोमयी मूर्ति अपने भक्तो को छोडकर अन्य लोक मे अग्रसर होने के लिए प्रस्थान कर गई थी।

(१९१)

(उपजातिच्छन्द)

लोको ब्रवीति स्म तदा, यदेते
नैव स्वदेहेन विराजमाना ।
तथापि तैर्यद्वचसोपदिष्टम्,
भवोदधेस्तत्तरणे सहायम् ।।

अर्थ उस समय लोग बाते कर रहे थे—यद्यपि ये गुरुवर अपने भौतिक देह से तो विराजित नही हैं, किन्तु उन्होने हमे जो अपनी वाणी से उपदेश दिया है, वह हमे भवसागर के पार करने मे सहायक होगा।

(१९२)

(उपजातिच्छन्द)

प्रशस्तचारित्रसुमूर्तयस्ते,
प्रभावनाया च तथाऽद्वितीया ।
मुक्तेरुपाय च जनान् दिशन्त,
लोकेऽभवञ्जगमतीर्थरूपा ।।

अर्थ मुनिश्री प्रशस्त चारित्र की एक शोभायमान मूर्ति थे। धर्म-प्रभावना मे वे अद्वितीय/बेजोड थे। लोगो को मुक्ति के उपाय का उपदेश देते हुए वे (हमारे लिए) इस ससार मे 'चल तीर्थ' रूप हो गए थे।

(१९३)

(उपजातिच्छन्द)

तपस्विभिर्यत्सुगुणानुवादा ,
अद्यापि सर्वत्र विधीयमाना ।
श्रूयन्त उत्कृष्टयशोधरास्ते,
नित्य प्रणम्या परमादरेण ।।

अर्थ आज भी उत्तम लोगो मे उनके सद्गुणो की चर्चा सर्वत्र होती हुई सुनी जाती है। ऐसे उत्कृष्ट कीर्ति वाले मुनिराज परम आदर के साथ सभी के लिए नमस्करणीय हो गए हैं।

(१९४)

(उपजातिच्छन्द)

ससार-पाथोधि-तितीर्षु-भव्य-
सन्मार्ग-निर्देशन-तत्पराणाम् ।
मुनीश्वराणा प्रशमान्वितानाम्,
वाणी शरण्या हितकारिणी या ।।

अर्थ ससार-समुद्र को पार करने के इच्छुक भव्य प्राणियों को सन्मार्ग का उपदेश देने मे तत्पर रहने वाले, प्रशमगुण-भूषित उन मुनिराज योगिराज श्री रामजीलाल जी महाराज की हितकारी वाणी (हम सबके लिए) शरण-योग्य है।

उपसंहार

(१९५)

(उपजातिच्छन्द)

प्रशस्तचारित्र-सुमूर्तयस्ते,
प्रभावनाया च तथाऽद्वितीया ।
मुक्तेरूपाय च जनान् दिशन्त',
लोकेऽभवञ्जगमतीर्थरूपा ।।

अर्थ . पूज्य श्री रामजीलाल जी महाराज प्रशस्त चारित्र की साक्षात् मूर्ति थे, धर्म-प्रभावना मे वे अद्वितीय थे और लोगो को मुक्ति के उपाय के उपदेशक के रूप में ससार मे चलते-फिरते एक 'तीर्थ' थे।

(१९६)

(उपजातिच्छन्द)

ससारपाथोधि-तितीर्षु-भव्य-
सन्मार्ग-निर्देशन-तत्पराणाम् ।
मुनीश्वराणा प्रशमान्वितानाम्,
पूज्यान् पदान्श्रीन् प्रणतोऽस्मि भक्त्या ।।

अर्थ · संसार-सागर मे तैरकर पार जाने के इच्छुक भव्य प्राणियो को सन्मार्ग का उपदेश देने मे सदैव तत्पर, प्रशमगुणयुक्त उन मुनिराज श्री रामजीलाल जी महाराज के पूज्य चरण-कमलो मे भक्तिपूर्वक नतमस्तक होता हू ।

(१९७)

(उपजातिच्छन्द)

जिनोक्तधर्मे च जिनेन्द्र-वाण्याम्,
श्रद्धा जनानामभिवर्द्धिता यै ।
श्रीरामजीलाल-मुनीन्द्रवर्या,
सदाऽभिवन्द्या मनसा सुभक्त्या ।।

अर्थ जिन-धर्म मे तथा जिनवाणी मे लोगो की श्रद्धा जिन्होने बढ़ाई, वे पूज्य मुनिराज श्री रामजीलाल जी महाराज भक्तिपूर्वक मन से सदैव अभिवन्दनीय हैं ।

(१९८)

(उपजातिच्छन्द)

श्रीरामजीलालमुनीश्वराणाम्,
तपोमय जीवनमत्र काव्ये।
तदीयपादाब्जयुगातिभक्त्या,
मया निबद्ध शुभदेववाण्याम् ।।

अर्थ पूज्यश्री मुनिराज श्री रामजीलाल जी महाराज के तपोमय जीवन को, उनके चरण-कमलो की अतिभक्तिवश, मैंने देववाणी (सस्कृत) मे इस काव्य मे निबद्ध किया है।

(१९९)

(अनुष्टुब्छन्द)

कामयेऽह स्वमनसा, सम्यक्त्वे दृढता भवेत्।
योगिराजमुनीन्द्राणाम्, पावनाचारकीर्तनात् ।।

अर्थ मैं मन से यह कामना करता हू कि पूज्य योगिराज मुनिश्री रामजीलाल जी महाराज के पावन चरित्र के कीर्तन से मेरे सम्यक्त्व मे दृढता आती जाय।

(२००)

(अनुष्टुब्छन्द)

श्रद्धाभरिताचित्तेन देववाणीकृतिर्मया।
यशोगीतिसुनाम्नीऽयम्, अर्घते तत्पदाब्जयो ।।

अर्थ 'यशोगीति' नाम की इस सस्कृत कृति को श्रद्धापूर्ण मन से उनके चरणकमलो मे अर्पित करता हू।

।।इति यशोगीति ।।